प्रधानमंत्री मोरार जी देसाई

रमेश अहसास

मूल्य : आठ रुपये/प्रथम संस्करण : १९७७/© रमेश अहसास / प्रकाशक : प्रेम प्रकाशन मन्दिर, ३०१२, बल्लीमारान, दिल्ली-११०००६/मुद्रक : सतीश कंपोजिंग एजेंसी द्वारा विकास आर्ट प्रिंटर्स, शाहदरा-दिल्ली-११००३२

MORAR JEE DESAI

Biography and Thoughts : By Ramesh Ahasas

समर्पण

पूजनीया माताजी
एवं
पूज्य पिताजी
तथा
उस समस्त सर्वशक्ति को
जिसने मेरे अन्दर
लेखन-प्रेरणा के बीज
अंकुरित किये।

लेखक की कृतियाँ

उपन्यास

* चाहत के फूल
* कोमल पत्थर
* तपती छांव

जीवनी

* हिन्द की चादर—गुरु तेगबहादुर
* प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई
* शहीद ऊधम सिंह

कहानी-संग्रह

* कहीं आस पास
* अपने अपने सुख (स०)

लेखकीय वक्तव्य

श्री मोरारजी देसाई का जीवन प्राचीन भारतीय मान्यताओं और नवीन विज्ञान के संगम में विशिष्ट सरलता एवं निर्मलता का एक अभिनन्दनीय व्यक्तित्व है। उनकी रचनात्मक प्रवृत्ति, सुधारवादी भावनाएँ, जीवन के प्रति प्रगाढ़ रुचि एवं आदर्शों के प्रति निष्ठा को देखकर हम स्वयं ही नतमस्तक हो जाते हैं। यहां एक आम धारणा की ओर ध्यान केन्द्रित हो जाता है, जब लोगों को अक्सर कहते सुना है कि उन्नति के लिए साधन और सुविधा होनी अनिवार्य है। तरक्की करना उन्हीं के भाग्य में लिखा है, जो खाते-पीते घरों में जन्म लेते हैं, किन्तु मोरारजी का जीवन ? उनके लिए साधन-सुविधाएँ अभिशाप थी। एक साधारण श्रेणी के परिवार में जन्म लेकर यथार्थ जीवन की अनेक रुकावटों और कठिनाइयों के उपरान्त भी वे अपने मार्ग से कदापि विचलित नहीं हुए। वह अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निरन्तर आगे बढ़ते रहे। उनका जीवन उन लोगों के लिए महान् प्रेरणा का स्रोत बन सकता है, जो प्रयास करने से पूर्व ही साहस तथा धैर्य छोड़ देते हैं। उन्होंने मौन रहकर देश की सेवा की, सत्य और अहिंसा के मन्त्र को व्यावहारिक रूप दिया है। उनका नाम आधुनिक जगत् में महात्मा गांधी, पंडित नेहरू और लालबहादुर शास्त्री के बाद की पीढ़ी में राजनीति को सचाई एवं सहकारिता का स्वरूप देने वालों में सर्वोपरि सुरक्षित है। वास्तव में मोरारजी के जीवन और व्यवहार में भारतीय संस्कृति के दर्शन हो जाते हैं।

इस समाज में कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो माओ के प्रसिद्ध कथन 'सत्ता बन्दूक की नली से निकलती है' और यह दुनिया गुटबंदियों का घर है, इस कथन में दृढ़ विश्वास रखते हैं। यहां सत्ता छल-कपट या बन्दूक की नली से भी छीनी जाती है एवं इसे कायम रखा जा सकता है। यह युग भावुकता की अपेक्षा

बौद्धिक उपलब्धियों का है, जहाँ अपने अस्तित्व को स्थिर रखने के लिए कौन-कौन से पापड़ नहीं वेलने पड़ते, परन्तु हाल के चुनावों से यह बात स्पष्ट हो गई है कि सत्ता बन्दूक या छल-कपट से नहीं, 'वोट' से भी प्राप्त की जा सकती है। इन क्रान्तिकारी परिवर्तनों की लम्बी प्रक्रियाओं में मोरारजी की प्रतिभा और भी मनमोहक रूप में उभरी है, जो उनकी सादगी, नम्रता तथा सौजन्य का एक विमुग्धकारी परिचय देती है।

मैंने मोरारजी के जीवन की मूल स्थापनाओं की खोज करने के साथ-साथ राष्ट्रीय जागृति का इतिहास, आपात्‌कालीन स्थिति का मूल्यांकन और जनतन्त्र की विजय को थोड़े शब्दों में वर्णित करने का प्रयास किया है, ताकि प्रस्तुत ग्रंथ प्रेरणा के स्रोत, एक संघर्षशील मानव के जीवन की झांकी और सुसंगठित राष्ट्र के निर्माण के लिए एक खुली चुनौती बन सके। अतः यदि पाठक इस पुस्तक में प्रकाशित विचारों को आन्तरिक भावना से ग्रहण करने का प्रयत्न करें तो मैं स्वयं को पुरस्कृत मानूंगा।

मैं यहाँ अपने आदरणीय श्री सुदर्शनकुमार बख्शी, श्री महेन्द्रपाल कौशल, डॉ० लालचन्द्र भारद्वाज एवं डॉ० मुरारिलाल शर्मा 'सुरस' के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करता हूँ, जिन्होंने मुझे इस कार्य को सम्पन्न करने के लिए बार-बार प्रेरित किया एवं अपना आशीर्वाद भी प्रदान किया है। इसके साथ ही मैं अपने उन 'अपनों' का भी हृदय से आभारी हूँ, जिनकी सद्‌भावनाएँ, सहयोग और सुझाव सदैव मेरे पाथेय रहे हैं।

अन्त में मैं प्रेम प्रकाशन मन्दिर के संचालक श्री प्रेमचन्द्र शर्मा और प्रिय अनिल शर्मा के प्रति भी धन्यवाद व्यक्त करता हूँ जिनके सहयोग के बिना पुस्तक-प्रकाशन की योजना का सूत्रपात होना ही असंभव था।

—रमेश 'अहसास'

लेखी निवास
साहनेवाल—१४११२० (पंजाब)

क्रम

जीवन-विकास



आज का भारत विविध क्रांतिकारी परिवर्तनों की लम्बी प्रक्रियाओं में से गुजर कर, लोकतन्त्र को नेतृत्व देने वाली प्रेरणा और प्रोत्साहन का केन्द्रबिन्दु है। इसकी प्राप्ति के लिए अनेकों जानें अर्पित हुईं, हजारों लोग बेघर हुए; असंख्य लोगों ने देश के स्वतन्त्रता-संग्राम में बलिदान दिए। इसी संघर्ष में महात्मा गाँधी जी प्रेरणा के स्रोत बने। पंडित नेहरू जी उस प्रेरणा-स्रोत के प्रकाश-पुंज !

नव-निर्वाचित प्रधान मन्त्री श्री मोरारजी देसाई का व्यक्तित्व आदर्श, त्याग, भारतीय राष्ट्र की अनुभूतियों एवं आकांक्षाओं का दिव्य प्रतिबिम्ब है। वे गाँधी-वाद के पक्के अनुयायी, सिद्धान्तों के अटल विश्वासी और भारतीय सभ्यता-संस्कृति की गौरवपूर्ण परम्पराओं के प्रतीक हैं। उन्होंने अपने अध्यवसाय, अद्भुत प्रतिभा, अनुपम सेवा-भावना, सच्ची साधुता, सादगी, विमुग्धकारी विनम्रता, अपार आत्मोत्सर्ग एवं मर्मस्पर्शी सहृदयता के बल पर राजनीतिक क्षेत्र में श्रेष्ठता की धाक जमा ली है जिससे प्रत्येक भारतीय गौरवान्वित हो उठा है।

मोरारजी देसाई परम सात्विक वृत्ति के सत्पुरुष और उच्चकोटि के विचार-शील व्यक्ति हैं। वह सीधे-सादे और अहं-रहित दिखाई देते हैं। राजनीति के द्वन्द्व और विषैले जीवन में भी इन्होंने मानवता के अमृत को खोज निकाला है। इसीलिए वह राजनीतिक जटिल समस्याओं में भी उच्च-स्तर की सौम्यता और मर्यादा का पालन करना अपना धर्म समझते हैं। वह भारतीय जीवन एवं मान्यताओं के वास्तविक प्रतिनिधि हैं। आधुनिक विज्ञान की चकाचौंध में भी उनका अपना अलग ही अस्तित्व बना है। वह पुरानी संस्कृति और आस्थाओं के निष्ठा

वान अनुगामी हैं। वह प्राचीन जीवन-दर्शन और विज्ञान के मध्य एक रचनात्मक भूमिका के पक्षपाती हैं। उनके मत-अनुसार इसमें पुरातन का आग्रह और वर्तमान तथा भविष्य की सुखद कल्पना विद्यमान है।

मोरारजी देसाई के व्यक्तित्व की सर्वप्रथम विशेषता स्पष्टवादिता और निर्भीकता है। उनकी इस वृत्ति पर अक्सर उनके गुण, शक्ति, क्षमता पर विरोध के बादल मंडराने लगते हैं किन्तु बौद्धिक क्षमता और उनकी स्मरण-शक्ति से प्रत्येक व्यक्ति आश्चर्यचकित रह जाता है एवं उनका गुणगान करने लगता है। वह सस्ती लोकप्रियता से दूर हैं। उनकी रचनात्मक प्रवृत्तियों, सुधार-वादी भावनाओं एवं विलक्षण प्रतिभा की दुर्लभ सम्पदा को देखकर चकित रहना पड़ता है। दृढ़ता, सरलता, कोमलता और नम्रता का उनमें अद्भुत सामंजस्य मिलता है।

मोरारजी देसाई मानवीय गुणों की खान हैं। उनके सरल एवं सात्विक रहन-सहन से भारत की नैतिकता को बल मिलता है। देश के सर्वोच्च पद पर आसीन होने के उपरान्त उनके व्यक्तित्व और विचारों में तनिक भी अन्तर नहीं आया बल्कि वह और भी निर्मल हो गए हैं। वह प्रशासनिक कार्यों में निष्पक्षता, न्याय और अनुशासन के अनुगामी रहे हैं। मोरारजी में राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी का सर्वोदय; राष्ट्रनायक पंडित जवाहरलाल नेहरूजी का लोकतांत्रिक समाजवाद; मौलाना आजाद का साम्प्रदायिक एकीकरण; सुभाष का क्रांतिकारी नेतृत्व एवं लौहपुरुष सरदार पटेल की दृढ़ता के विभिन्न गुण विद्यमान हैं।

मोरारजी देसाई की गांधीजी की विचारधारा में अटूट विश्वास है। सत्य-अहिंसा, लोकतन्त्र और व्यक्तिगत स्वतन्त्रता में इनकी पूर्ण आस्था है। बौद्धिक शक्ति और आन्तरिक प्रतिभा की घनी परत के फलस्वरूप उनमें सतही बातें दिखाई नहीं देतीं। चमक-दमक तथा बाहरी दिखावट से वे कोसों दूर रहते हैं। इनका लोकतन्त्र में ज्वलंत विश्वास और निष्ठा है।

मोरारजी देसाई की ओजपूर्ण वाणी में भारत के करोड़ों निवासियों के मूक हृदय की भावना प्रतिध्वनित होती स्पष्ट हो रही है। यही भारतीय जनता की श्रेष्ठतम निधि है। इसी तत्त्व के आधार पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि जो व्यक्ति इतना महान् है, उसके प्रारम्भिक जीवन के विषय में जानने की स्वाभा-

विक जिज्ञासा रहती है। अमरीका के सुप्रसिद्ध विद्वान् नीग्रो बुकर टी० वाशिंगटन का मत है कि किसी व्यक्तित्व की ऊँचाई इस बात से नहीं आंकी जाती कि वह उन्नति के कितने शिखर पर पहुँचा है परन्तु वह तो उससे सम्बन्धित है कि वह व्यक्ति कहाँ से चलकर जीवन की कौन-सी मंजिल तक पहुँचा है ? क्या यह बात सचमुच मोरारजी देसाई के विषय में ठीक उतरती है ? अक्सर लोग यह तर्क देते हैं कि साधन-सुविधाओं के तथा बड़े घराने के व्यक्ति ही शासन के अधिकारी हैं परन्तु मोरारजी का जीवन-दर्शन इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि बौद्धिक उपलब्धियों, सैद्धान्तिक तत्त्वों, साधना-सम्पन्नता और संघर्षशीलता के सहारे भी मानव साधारण मिट्टी से उठ कर हिमालय के पर्वत समान ऊँचे सामाजिक सिंहासन तक पहुँच जाता हैं ।

प्राचीन काल से ही गुजरात की पुण्य-भूमि को महात्माओं, दार्शनिकों, राजनीतिज्ञों और महापुरुषों की जन्मभूमि तथा कर्मभूमि से संज्ञा दी जाती है । इसी भूमि पर महात्मा गांधी और सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसी महान् आत्माओं ने जन्म लिया । यही पावन धरती मोरारजी देसाई की जन्मभूमि है । उनका जन्म २९ फरवरी १८९६ को बलसाड़ के एक छोटे से गाँव भदेली में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ । मोरारजी देसाई के पिता श्री रणछोड़ भाई देसाई भावनगर राज्य में मिडिल स्कूल के प्रधान अध्यापक थे ।

मोरारजी देसाई के पिता श्री रणछोड़ देसाई अपनी ही वृत्ति के पुरुष थे। वह किसी से अधिक बातें न करते थे । अनुशासन से उन्हें विशेष लगाव था । वह एक आत्मार्पित राष्ट्रवादी थे। वह सदा धोती, कोट और पगड़ी पहनते थे । वह मोरारजी को प्यार में 'मूर' कहकर पुकारते थे । (गुजराती भाषा में मूर का अर्थ है पीकोक—मोर) बालक मोरारजी में अपने पिता के गुण विकसित होने लगे । इन्हें प्रारम्भिक शिक्षा दिलाने के लिए समीप ही शहर के स्कूल में दाखिल करवा दिया गया जहाँ जाने के लिए एक नदी पार करनी पड़ती थी । मोरारजी स्वभाव से अत्यन्त संकोची थे । वह स्कूल से कभी भी गैरहाजिर नहीं हुए । वह खेलने में बहुत कुशल थे । स्कूल के पश्चात् उनका अधिकतर समय विभिन्न खेलों में व्यतीत होता था । इन्होंने स्कूल या कालेज की किसी प्रतियोगिता में भाग नहीं लिया ।

प्रथम दु:खद घटना

अभी मोरारजी की आयु लगभग पन्द्रह वर्ष की थी कि इनके पिताजी का अकस्मात् देहान्त हो गया। इससे पूर्व मोरारजी के नाना ने इनका विवाह एक माल-अधिकारी की ग्यारह वर्षीया कन्या गजराबेन से निश्चित कर दिया था। सभी सम्बन्धी विवाह के उपलक्ष्य में एकत्र हुए थे। विवाह से केवल दो दिन पहले सायंकाल के लगभग सात बजे समाचार मिला कि मोरारजी के पिता घर के पिछवाड़े वाले कुएं में गिर पड़े हैं। प्रयत्न करने पर भी उन्हें बचाना असंभव हो गया। उन्होंने थोड़ी देर पहले मोरारजी को कहा था—

मूर! खाना तैयार है।

किन्तु इस अनहोनी घटना का कोई भी कारण अवगत न हो पाया। इसके विषय में केवल अनुमान लगाया जाता रहा क्योंकि वे पिछले कुछ समय से उदास और गुमसुम ही रहते थे।

मोरारजी को अपने पिता से बहुत लगाव था। इस घटना से वह अत्यधिक दुखी और परेशान थे। इसने उन्हें झकझोर दिया था। कैसी अद्भुत विडम्बना थी! विवाह की तिथि निश्चित हो चुकी थी। हिन्दू नियमानुसार विवाह होना ही था। इस प्रकार पिता के अस्थिअवशेष के तीसरे दिन विवाहोत्सव का कार्य नाना जी द्वारा सम्पन्न हुआ। मोरारजी का मन खिन्न और उदास था।

मोरारजी का पारिवारिक जीवन दायित्वों के बोझ के नीचे दब गया। पहले तो वह अपनी माता और अन्य भाई-बहिनों के संग अपनी ननिहाल चले गए। परिवार के कुल आठ सदस्य थे परन्तु शीघ्र ही वह अपने पिता वाले घर बलसाड़ लौट आए, क्योंकि उनकी माँ की नानी से पट न सकी। इस छोटी-सी अवस्था में इन्हें अनेक दुःख झेलने पड़े। जीवन की परिस्थितियों और संस्कारों ने उनका स्वभाव गम्भीर बना दिया।

मोरारजी देसाई अत्यन्त मेधावी छात्र थे। पन्द्रह वर्ष की आयु में मैट्रिक की परीक्षा में ४५ वीं पोजीशन लेकर उन्हें स्कॉलरशिप मिला। उन्होंने बम्बई विल्सन कालेज में प्रवेश लिया। कालेज के छात्रावास में मेधावी और निर्धन छात्रों के लिए निःशुल्क रहने-खाने की व्यवस्था थी। दस रुपए की मासिक छात्रवृत्ति में से अधिक से अधिक पैसे वह अपनी माँ को भेज देते थे। कुछ पैसा वह ट्यूशन से भी कमा लेते थे। इस तरह जैसे-तैसे परिवार का खर्च चलने

लगा। बचपन से ही अपना काम स्वयं करने की आदत मोरारजी ने बना रखी थी और यहां रहकर यह और भी सुदृढ़ हो गई। इसी अवस्था में उपवास; व्यायाम और प्राकृतिक चिकित्सा की ओर ध्यान केन्द्रित हो गया।

कालेज के जीवन में भी मोरारजी आदर्शवादी के रूप में प्रसिद्ध थे। उन्हें फिल्म या नाटक में तनिक भी दिलचस्पी न थी। मित्रों के आग्रह पर शायद ही कोई फिल्म देखी होगी। इन दिनों इनकी विशेष रुचि क्रिकेट मैच देखने की हो गई परन्तु इसके लिए भी इन्होंने किसी प्रकार की फिजूलखर्ची न की। वह भी केवल अधिक से अधिक पैसा बचा कर अपने घर भेजना चाहते थे। दूसरे वह सदैव सोचते थे कि अगर उन्हें छात्रवृत्ति न मिली तो उनका भविष्य अंधकारमय हो जाएगा। इस उद्देश्य से वह पढ़ाई में रात-दिन एक कर देते। इन्टर की परीक्षा में गलती से गणित का पेपर २५ अंकों का छूट गया। संस्कृत पेपर में घबरा गए लेकिन सौभाग्यवश वह अच्छे अंकों में उत्तीर्ण हो गए।

इन दिनों मोरारजी राजनीतिक गतिविधियों से अनभिज्ञ न रह सके। बंग-भंग आन्दोलन के बीच इन्होंने चाय पीना छोड़ दिया। देश में राजनीतिक चेतना बढ़ रही थी। अभी वह चौदह वर्ष के थे कि लोकमान्य तिलक ने विदेशी वस्तुओं का प्रयोग न करने का निर्णय लिया। मोरारजी इससे बहुत प्रभावित हुए एवं विदेशी वस्तु का प्रयोग न करने का संकल्प किया। धीरे-धीरे बम्बई राष्ट्रीय हलचल का मुख्य केन्द्र बन गया। मोरारजी ने अपने सहपाठियों के संग राष्ट्रीय नेता श्री गोपाल कृष्ण गोखले, लोकमान्य तिलक, श्रीमती सरोजिनी नायडू के कई राष्ट्रवादी भाषण सुने। वह अक्सर अपने मित्रों में इनके विषय में टीका-टिप्पणी भी करते किन्तु जीवन की आर्थिक परिस्थितियों के कारण वह सक्रिय राजनीति से दूर रहने लगे। अन्दर ही अन्दर राष्ट्रीय वेदना गुदगुदाने लगी। एक बार तो १९१५ में कांग्रेस के अधिवेशन में प्रतिभाशाली सेवक की तरह बढ़-चढ़ भाग लिया एवं अपने अन्य सहपाठियों को भी प्रोत्साहित किया।

इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् मोरारजी ने बी० ए० में विज्ञान के विषय लिए और बम्बई विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में स्नातक की डिग्री प्राप्त करने हेतु उन्हें पचास रुपए मासिक छात्रवृत्ति मिली। मोरारजी का विचार था कि एम० एस-सी० करके प्रोफेसर बनेंगे। इन दिनों यूनिवर्सिटी ट्रेनिंग कोर की शिक्षा उच्च अधिकारी की नियुक्ति के लिए अनिवार्य योग्यता

मानी जाती थी। इस उद्देश्य से आपने यूनिवर्सिटी ट्रैनिंग कोर की ट्रेनिंग ली तथा एक अधिकारी के रूप में काम किया। अतः पी० टी० के० के कप्तान ने मोरारजी के कार्य से प्रसन्न होकर एक बढ़िया 'प्रमाण-पत्र' भी दिया।

मोरारजी अपने प्रारम्भिक जीवन से ही निर्भीक, सुदृढ़, संयमी और स्वाभिमानी युवक थे। कालेज के दिनों की एक घटना प्रसिद्ध है। मोरारजी ने प्रान्तीय सिविल सर्विस के लिए 'प्रार्थना-पत्र' दिया था एवं इसके साथ 'चरित्र-प्रमाण-पत्र' की आवश्यकता थी। इन्होंने अपने कालेज के प्रिंसीपल डॉ० स्कॉट को 'चरित्र-प्रमाण पत्र' देने की प्रार्थना की परन्तु प्रिंसीपल ने इंकार कर दिया। इस बात का मोरारजी के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। इन्होंने इसे अपना अपमान समझा। इन्होंने मन में दृढ निश्चय कर लिया कि वह भविष्य में प्रिंसीपल को अभिवादन (wish) नहीं करेंगे। कई एक दिन तक प्रिंसीपल इस क्रिया को देखते रहे। एक दिन प्रिंसीपल डॉ० स्कॉट ने इसका कारण जानना चाहा। मोरारजी ने तुरन्त उत्तर देते हुए कहा—

—सर! आपने चरित्र-प्रमाण-पत्र देने से इंकार जो कर दिया है।

—तुम्हें सर्टीफिकेट किस लिए चाहिए था।

—मैं प्रान्तीय सिविल सर्विस के लिए प्रार्थना-पत्र भेजना चाहता था।

तभी प्रिंसीपल डॉ० स्कॉट ने सर्टीफिकेट के अतिरिक्त अपने घनिष्ठ मित्र के नाम सिफारिशी पत्र देने के लिए भी पूछा जो उन दिनों सर्विस की नियुक्ति में उपयोगी सिद्ध हो सकती थी किन्तु मोरारजी ने एकाएक कहा—

'मुझे सिफारिश नहीं बल्कि चरित्र-प्रमाण-पत्र चाहिए'।

डॉ० स्कॉट मोरारजी के व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित हुए और उन्हें बहुत बढ़िया चरित्र-प्रमाण-पत्र दिया। इसका यह अर्थ कदापि नहीं लेना चाहिए कि मोरारजी अपने अध्यापकों का सम्मान नहीं करते थे। बल्कि इस घटना का भाव केवल मोरारजी की सुदृढ़ विचार-धारा और स्वाभिमान तक ही सीमित है।

मोरारजी ने अपने प्रोफेसर श्री पी० एन० नायक की राय के अनुसार बम्बई की प्रान्तीय सिविल सर्विस के रिक्त स्थान के लिए प्रार्थना-पत्र भेज दिया परन्तु पी० टी० के० का प्रमाण-पत्र साथ न लगा सके। जैसे ही मोरारजी के मित्र कारवेट को अवगत हुआ तो उन्होंने मोरारजी को पी० टी० के० के प्रमाण-पत्र भेजने के लिए आग्रह किया, क्योंकि वह जानते थे कि अंग्रेज

शासक इस प्रमाण-पत्र के बिना इन्टरव्यू के लिए नहीं बुलायेंगे। उनका अनुमान ठीक ही निकला। फलस्वरूप मोरारजी को भी इन्टरव्यू के लिए न बुलाया गया। लेकिन इसी बीच मोरारजी ने पी० टी० के० का प्रमाण-पत्र भेज दिया। अतः वे बुलाए गए। उम्मीदवारों में इनका नम्बर १३वां और अन्तिम था जो इनके लिए शुभ एवं वरदान सिद्ध हुआ। इन्टरव्यू के समय भी अनेक प्रश्न पूछे गए। एक प्रश्न इस प्रकार था—

—अगर आप न चुने गए तो क्या उदास हो जायेंगे?

मोरारजी ने विनम्रता से एकदम उत्तर दिया—

—इसमें उदास होने की क्या बात है। अभी संसार के अनेक कार्य मेरे सम्मुख हैं।

मोरारजी ने उत्तर पूर्ण विश्वास और निष्ठा से दिया। इस प्रकार बिना किसी सिफारिश के इन्हें चुन लिया गया।

राजनीतिक एवं सार्वजनिक जीवन का आरम्भ



मई १९१८ में मोरारजी देसाई की अहमदाबाद में डिप्टी कलेक्टर के पद पर नियुक्ति हो गई। आगे के बारह वर्षों में इन्होंने प्रशासनिक, राजस्व और न्यायिक कार्यों में एक कर्मठ और कुशल अधिकारी के रूप में काम किया। बहुत थोड़े समय में मोरारजी अपनी शासकीय योग्यता से सरकारी कर्मचारियों की सुविधा और कठिनाइयों से परिचित हो गये। उनका अधिकांश समय लोक-सेवा में व्यतीत होने लगा। वह चाहते थे कि सभी अनुशासन का पालन करें। दूसरों से कहने से पूर्व वह स्वयं इसका पालन करते थे। इन दिनों ब्रिटिश शासकों का भारतीय कर्मचारियों के प्रति सौतेली माँ वाला व्यवहार था। वह प्रत्येक साधारण बात पर भी इन्हें दबाना चाहते थे। अन्दर-ही-अन्दर मोरारजी इस बात से बहुत दुखी थे। आखिर ऐसी सीमा आ गई जब और अत्याचार सहना असम्भव हो गया। मोरारजी ने अनुभव किया कि ऐसी अवस्था में उनका प्रशासनिक पद पर बने रहना कोई उपयुक्त कदम नहीं है। देश में ब्रिटिश साम्राज्य के कठोर प्रशासन के विरुद्ध राष्ट्रीय भावना की ज्वाला प्रचण्ड हो रही थी। आखिर साम्प्रदायिक दंगों के अभियोग की रिपोर्ट पर ब्रिटिश अधिकारियों के साथ मोरारजी की दृष्टि गई। ब्रिटिश प्रशासनिक अधिकारी का मत था कि मोरारजी का तर्क भारतीय पक्ष में जानबूझ कर है लेकिन उन्होंने इसकी केवल न्यायिक स्तर में ही टीका-टिप्पणी की थी। अतः मोरारजी ने १९३० में सरकारी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया।

देश में विक्टोरिया-युग की समाप्ति के पश्चात् राष्ट्रीय जागरण में एक नूतन अध्याय का सृजन हो गया था। कांग्रेस ने रौलट एक्ट के विरुद्ध देश-व्यापी आन्दोलन का बिगुल बजा दिया था। सारे राष्ट्र ने इसका सम्मान किया था। देश के विभिन्न भागों में अन्यायपूर्ण कानून को तोड़ने की प्रतिज्ञा की गई किन्तु जिन राष्ट्रीय नेताओं ने भारत को स्वतन्त्र करवाने का कार्य हाथ में लिया; उसकी गति अति धीमी थी। दादा भाई नौरोजी, लोकमान्य तिलक इत्यादि अनेक नेताओं ने बहादुरी से अग्रसर होकर ब्रिटिश साम्राज्य को चुनौती दी। तभी अकस्मात् महात्मा गांधी ने भारतीय राजनीति में हलचल मचा दी। गांधीजी के नेतृत्व ने स्वतन्त्रता-संग्राम की आग को भड़का दिया। देखते-ही-देखते पं० मोतीलाल नेहरु, वल्लभभाई पटेल, डा० राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचार्य, जवाहरलाल नेहरु, सरोजिनी नायडू, मौलाना आजाद, लाला लाजपतराय एवं अलीबन्धु जैसे विख्यात व्यक्तियों ने भी महात्मा गांधी के मार्ग-दर्शन में निष्ठा व्यक्त की एवं उन्हीं के बताये मार्ग को अपना लिया।

कर दिया, जिससे सोए राष्ट्र की आत्मा जाग उठी। सारे देश में एक तूफ़ान-सा खड़ा हो गया। बड़े-बड़े शहरों में 'हड़ताल दिवस' मनाया गया। महात्मा गांधी ने राष्ट्रीय अधिवेशन में कहा—

"—यह सभा समझती है कि खिलाफत और पंजाब-काण्ड में राष्ट्र का जो अपमान हुआ है, उसे धोने के लिए तथा उसकी पुनरावृत्ति न होने देने के लिए यही एक मार्ग है कि हिन्दुस्तान स्वराज्य प्राप्त करे – तथा उसके लिए असहयोग ही एकमात्र रास्ता है। इस सभा का जनता को यह सन्देश है कि लोग सरकारी खिताब वापस करें। सरकारी तथा अर्ध-सरकारी अधिकारियों के सम्मानार्थ होने वाले समारोहों में कोई भाग न लें। स्कूल और कालेजों से लड़कों को निकाल लिया जाये। अंग्रेजों द्वारा शासित न्यायालयों का बहिष्कार किया जाए तथा अपने निजी न्यायालय स्थापित करके पंचों द्वारा मुकदमों का फैसला किया जाये—विदेशी माल का बहिष्कार किया जाए। अनुशासन तथा त्यागवृत्ति के बिना राष्ट्र की प्रगति असम्भव होने के कारण सारी जनता में ये गुण पैदा करने का काम यह आन्दोलन सबसे पहले शुरू करेगा। राष्ट्र की मिलों का उत्पादन राष्ट्र की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त न होने के कारण घर-घर चरखा चलाया जाए तथा हाथ के बुने कपड़े के धन्धे को प्रोत्साहित किया जाये।"

जनता के रक्त में उबाल रह-रहकर उठ रहा था। महात्मा गांधीजी के एक ही संकेत पर लाखों आदमी असहयोग के लिए तुल गये। गुजरात में हो रहे उपद्रव में मोरारजी ने श्री वल्लभ भाई पटेल के साथ मिलकर काम किया। मोरारजी ने अभी तक महात्मा गांधी को देखा न था, लेकिन गांधीजी की वाणी का एक-एक शब्द उनके अंग-अंग में समा गया था। उन्हें महात्मा गांधीजी के आन्दोलन में पूर्ण निष्ठा और विश्वास हो गया। वह शीघ्र ही अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के सदस्य बन गये। वल्लभ भाई पटेल के संग मिलकर मोरारजी ने गाँव-गाँव घूमकर अपढ़ किसानों को सत्याग्रह तथा 'कर न दो' का पवित्र सन्देश पहुँचाना आरम्भ कर दिया। उनका मत था कि अगर देश की अनपढ़ जनता को स्वतन्त्रता और स्वराज्य की भूमिका स्पष्ट हो जाये तो महात्मा गांधीजी के स्वराज्य को प्राप्त करने में सुविधा हो सकती है। महात्मा गांधीजी,

मोरारजी के उत्साह और लगन से बहुत प्रभावित हुए और मोरारजी के प्रति उनके मन में स्थान बन गया।

असहयोग आन्दोलन

महात्मा गांधीजी के असहयोग आन्दोलन के बिगुल बजने से देश में असहयोग की ज्वाला प्रज्वलित होने लगी। हजारों-लाखों लड़के-लड़कियों ने स्कूल-कालेज छोड़ दिए। उच्चकोटि के न्याय-पण्डितों—पं० मोतीलाल नेहरू, सी० आर० दास, वल्लभ भाई पटेल, राजगोपालाचार्य एवं बाबू राजेन्द्रप्रसाद ने न्यायालय का बहिष्कार करके अपने हजारों रुपयों के व्यवसाय पर पानी फेर दिया। बाबू सुभाषचन्द्र ने आई० सी० एस० की नौकरी ठुकरा दी।

असहयोग के कारण अनेक नेता गिरफ्तार कर लिए गये। सरकार ने अपनी दमन-नीति को जोर से आरम्भ कर दिया। विभिन्न राज्यों में कांग्रेस एवं सहयोगी संस्थाओं को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया, परन्तु सरकार जितना दबाती; असहयोग की भावना उतनी ही बढ़ती जाती। शक्तिशाली सत्ताधारियों का सिंहासन हिल उठा। गांधी टोपी देखते ही सरकार का सिर चक्कर खाने लगता। इसमें सन्देह नही है कि इस आन्दोलन से प्रत्यक्ष स्वराज्य नहीं मिल सका, पर भारतीय जनता की आँखों से गुलामी और कमजोरी की तन्द्रा हट गई। वह निःसंशय मन से स्वतन्त्र हो गई। भय नौ-दो-ग्यारह हो गया। गांधीजी का इस आन्दोलन से केवल अभिप्राय इतना था कि लोगों में स्वार्थ-त्याग की भावना उत्पन्न की जाये।

असहयोग आन्दोलन में मोरारजी भी वल्लभ भाई पटेल के संग गुजरात के सच्चे नेता के रूप में उभरे। सरकार के अनेक कष्टकारी दमन के चक्कर में भी वह गुजरात में कांग्रेस संगठन को सुदृढ़ बनाने में डटे रहे। इसी बीच गांधीजी ने अपने साथियों के साथ दाण्डी-यात्रा में नमक बनाकर 'नमक कानून' तोड़ा। नमक कानून भंग करने के दोष में सभी नेता गिरफ्तार कर लिए गये। मोरारजी को भी इस अपराध में पकड़ लिया गया।

जेल की मुक्ति के पश्चात् मोरारजी पुनः राष्ट्रीय कार्य में जुट गये एवं यह गुजरात प्रदेश कांग्रेस कमेटी के प्रधान बन गये। सरकार ने असहयोग आन्दोलन को कुचलने के लिए नया षड्यन्त्र 'Divide and Rule' रचा।

उन्होंने मुसलमानों को हिन्दुओं के विरुद्ध खड़ा कर दिया, परन्तु मोरारजी अपने पथ से तनिक भी विचलित न हुए और अपने कार्य-क्षेत्र में निरन्तर लगे रहे। १९३२ में मोरारजी को पुनः राष्ट्र-विद्रोह के दोष में गिरफ्तार कर लिया गया, परन्तु अक्तूबर १९३३ में अच्छा व्यवहार प्रदर्शित करने के कारण उन्हें छोड़ दिया गया। फिर एक मास के भीतर पुनः पकड़ लिया गया। १९३४ में महात्मा गांधीजी के असहयोग आन्दोलन के वापिस लेने से अन्य नेताओं के साथ मोरारजी को भी रिहा कर दिया गया।

पार्लियामेंटरी बोर्ड एवं १९३५ का गवर्नमेंट आफ इण्डिया एक्ट

गाधी-इर्विन पैक्ट के अनुसार कांग्रेस के सभी नेता छोड़ दिए गये एवं ६ जून, १९३४ को कांग्रेस, सहयोगी दल एवं विभिन्न कमेटियों से पाबंदी उठा ली गई। पटना में कांग्रेस महासमिति ने अपनी बैठक में चुनाव के लिए एक कांग्रेस पार्लियामेंटरी बोर्ड बनाने की योजना बनाई। इसके अध्यक्ष सरदार वल्लभ भाई पटेल और सदस्य—डॉ० राजेन्द्रप्रसाद, डॉ० अंसारी, मौलाना अबुलकलाम आजाद तथा पंडित मदनमोहन मालवीय थे।

दूसरी ओर ब्रिटिश सरकार भारत मे जन-जागरण एवं स्वतन्त्रता के विषय पर भारत के भावी शासन-विधान पर विचार-परामर्श कर रही थी। ब्रिटिश पार्लियामेंट के दोनों सदनों ने ३० जुलाई, १९३५ को भारत का शासन-सम्बन्धी बिल पास कर दिया। २ अगस्त, १९३५ को जार्ज पंचम ने अपनी स्वीकृति दे दी। इस गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया एक्ट १९३५ के अनुसार भारतीय प्रान्तों को बहुत अधिक स्वतन्त्रता देकर केन्द्रीय शासन में प्रान्तों और देशी राज्यों का फेडरेशन बनाने का विचार प्रकट किया गया था।

इस एक्ट पर भारतीय राजनीतिक संघों ने मिली-जुली प्रतिक्रिया को व्यक्त किया। सरकार ने प्रान्तीय विधान सभाओं के नए निर्वाचनों के लिए मतदाताओं की नई सूचियाँ बनाने का कार्य बड़ी तेजी से आरम्भ कर दिया। कांग्रेस ने अपना ४९वाँ वार्षिक अधिवेशन, लखनऊ में पंडित जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में बुलाया। इसमें नए एक्ट के अनुसार सभी प्रान्तीय सभाओं के चुनाव में भाग लेने के लिए निश्चय किया गया।

कांग्रेस की निर्वाचनों में विजय और मन्त्रीपद स्वीकार

फरवरी १९३७ के अन्त तक भारत की सभी प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनाव सम्पन्न हो गये। निर्वाचनों के फलस्वरूप पाँच प्रान्तों – बिहार, उड़ीसा, मद्रास और उत्तर प्रदेश में कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत मिल गया। बम्बई (गुजरात और महाराष्ट्र) आसाम, बंगाल और पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त में अन्य दलों की अपेक्षा भारी मत से विजय प्राप्त हुई। ऐसी भारी सफलता का विश्वास कांग्रेस को कदापि न था। कांग्रेस ने १५ मार्च से २२ मार्च, १९३७ तक दिल्ली में राष्ट्रीय महोत्सव मनाया एवं अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने यह निश्चय किया कि "जिन प्रान्तों में कांग्रेस का स्पष्ट बहुमत है, वहाँ गवर्नर द्वारा विशेष अधिकारों का प्रयोग न किये जाने का स्पष्ट वचन ले कर ही मन्त्री-पदों को ग्रहण किया जा सकता है।" फलतः वायसराय के संतोषजनक वचन के अन्तर्गत छः प्रान्तों में शीघ्र मन्त्री-मण्डल बना लिए गये।

प्रथम कांग्रेस मंत्रिमण्डल में मोरारजी को राजस्व मन्त्री का पद

मोरारजी देसाई वलसाड़ चुनाव-क्षेत्र से निर्वाचित होकर बम्बई विधान सभा के सदस्य बने। वल्लभ भाई पटेल की सलाह से श्री एन० बी० खरे को विधान सभा का नेता चुना गया एवं इस मन्त्रिमण्डल में श्री देसाई को राजस्व मन्त्री के पद के लिए चुना गया।

मोरारजी ने अपने इस राज्य-काल में राजस्व-सम्बन्धी मामले, किरायेदारी कानून (टेनेन्सी एक्ट) बनाने में विशेष योगदान दिया। इसी काल में सार्वजनिक नैतिक स्तर के अतिरिक्त दूरगामी भूमि-सुधार कानून बनाए गये। पुलिस-संगठन में सुधार किया गया एवं कार्यपालिका से न्यायपालिका को पृथक् रखने के लिए साधन जुटाये। इस प्रकार मोरारजी देसाई ने राजस्व-मन्त्री पद पर अनेक रचनात्मक कार्य किये। इस काल में उन पर महात्मा गांधी तथा सरदार पटेल के अद्वितीय व्यक्तित्व, आदर्शवादी विचारों तथा सिद्धान्तों का गहरा प्रभाव था। उन्होंने जीवन में सादगी, सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तों को अपनाने का संकल्प ले रखा था।

कांग्रेस मंत्रिमण्डलों का त्याग-पत्र तथा द्वितीय महायुद्ध

आठ प्रान्तों में कांग्रेस के मंत्रि-मण्डल भली प्रकार लगभग अढ़ाई वर्षों से शासन करते आ रहे थे। अकस्मात् १९३९ के मध्य में यूरोप पर दूसरे महायुद्ध के काले बादल घिर आए। विश्व के सभी देश युद्ध की तैयारी में जुट गये। जर्मनी ने प्रथम सितम्बर, १९३९ को पोलैण्ड पर आक्रमण कर दिया। ब्रिटेन और फ्रांस ने ४ सितम्बर को जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। ब्रिटिश शासकों ने भारत को जर्मनी के विरुद्ध युद्ध-योजना के लिए वायसराय और महात्मा गांधी में बातें करने का प्रस्ताव रखा, क्योंकि वह भली-भाँति जानते थे कि भारतीय शासन की बागडोर कांग्रेस के हाथ में है। कांग्रेस की कार्यसमिति ने युद्ध के उद्देश्यों का स्पष्टीकरण मांगा।

वायसराय ने बहुत विचार-परामर्श के पश्चात् घोषणा की "ब्रिटेन का उद्देश्य भारत को औपनिवेशिक स्वराज्य देना है। युद्ध के समाप्त होते ही १९३५ के एक्ट में सभी सम्प्रदायों तथा निहित स्वार्थ वालों की सम्मति से संशोधन कर दिया जाएगा।" वायसराय के इस वक्तव्य को कांग्रेस नेताओं ने अत्यन्त असन्तोषजनक समझा। कांग्रेस-अध्यक्ष डॉ० राजेन्द्रप्रसाद के अधीन कांग्रेस कार्यसमिति ने वायसराय की घोषणा के पश्चात् सभी प्रान्तों में कांग्रेस मंत्रि-मण्डलों ने त्यागपत्र देने का निश्चय किया। अस्तु, कांग्रेस के मंत्रि-मण्डलों ने युद्ध का प्रस्ताव पास करके त्यागपत्र दे दिया।

सारी स्थिति को समझते हुए वायसराय ने पुन: कांग्रेस नेताओं से वार्त्तालाप आरम्भ किया एवं १० जनवरी, १९४० को वायसराय ने घोषणा की कि "ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य भारत को वेस्ट मिनिस्टर स्टैट्यूट के अनुसार औपनिवेशिक स्वराज्य देना है। यह अल्पतम समय में दिया जाएगा" किन्तु भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता और संविधान परिषद् द्वारा भारतीय विधान सभाएँ बनाए जाने के अधिकार के अतिरिक्त कांग्रेस को अन्य कुछ भी स्वीकार न था। फलत: कांग्रेस के ५३वें अधिवेशन में पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव को पास करके सत्याग्रह आरम्भ करने का निश्चय किया गया।

दमनकाल का आरम्भ

ब्रिटेन के राजनीतिक जीवन में काफी उथल-पुथल आई। मिस्टर चैम्बरलेन

के पतन के पश्चात् विंस्टन चर्चिल प्रधानमन्त्री और भारतीय मन्त्री मिस्टर एल० एम० एमरी बन गये। भारत में पूर्ण स्वराज्य आन्दोलन की योजना बन रही थी। ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस से बात न करके समस्त आन्दोलन को कुचलना चाहा। १ सितम्बर को विभिन्न प्रान्तों में कांग्रेस के मुख्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। ६ सितम्बर को भारत-मन्त्री श्री एमरी ने लोकसभा (House of Commons) में घोषणा की कि "भारत का वायसराय भारत पर मुस्लिम-लीग तथा हिन्दू महासभा आदि की सहायता से शासन करता रहेगा। कांग्रेस के विरोध की कोई भी चिन्ता न की जाएगी।"

सर्वप्रथम पंडित जवाहरलाल नेहरू को गिरफ्तार किया गया। इससे सारे देश में हाहाकार मच गया। समस्त देश में हड़ताल की गई। इसके तुरन्त बाद कांग्रेस कार्यसमिति के अन्य सदस्य, भूतपूर्व मन्त्री और सहयोगी सदस्यों को पकड़कर जेलों में बन्द कर दिया गया। इस काल में लगभग २५००० सत्याग्रही पकड़े गये। यह आन्दोलन लगभग चौदह मास चलता रहा। मोरारजी को भी ग्यारह मास की कड़ी सजा मिली।

१९४२ में ब्रिटिश सरकार ने सर स्टेफोर्ड क्रिप्स को कुछ नए प्रस्ताव देकर भारत भेजा ताकि भारत की जनता को विश्व-युद्ध में सहयोग के लिए प्रेरित किया जाये। इस उद्देश्य से सर स्टेफोर्ड क्रिप्स ने दिल्ली में कांग्रेस नेताओं तथा अन्य राजनीतिक दलों की एक बैठक बुलाई। इस बैठक में सर स्टेफोर्ड क्रिप्स ने अपने प्रस्ताव को रखा, जिसका मुख्य सारांश इस प्रकार था—

१. भारत को औपनिवेशिक दर्जा दिया जाएगा और यह दर्जा अन्य ब्रिटिश उपनिवेशों से किसी भी तरह कम न होगा।
२. विश्व महायुद्ध के समाप्त होते ही संविधान परिषद् का गठन किया जाएगा, जिसमें सभी राजनीतिक दलों का सहयोग होगा।
३. देश में प्रथम प्रान्तीय धारा सभाओं के सदस्यों को चुना जाएगा एवं वे संविधान परिषद् का चुनाव करेंगे।
४. विभिन्न राज्यों को संविधान परिषद् में अपनी जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होगा।
५. संविधान परिषद् के अन्तिम निर्णयों का अधिकार ब्रिटिश सरकार के हाथों होगा।

६. भारत का सेना-विभाग युद्ध-काल में ब्रिटिश सरकार के निरीक्षण में कार्य करेगा और अन्य विभाग लोक-प्रतिनिधियों के हाथ में होंगे।

किन्तु कांग्रेस कार्यसमिति ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार करके ब्रिटिश सरकार की सारी योजना पर पानी फेर दिया। इसी प्रस्ताव में अंग्रेजों को भारत छोड़ने का भी आग्रह किया गया। महात्मा गांधीजी ने अपना मत घोषित करते हुए कहा—"···मुझे पूर्ण स्वतंत्रता चाहिए। सेना की गतिविधि से यदि हमारी गुलामी की जंजीरें और भी मजबूत होने वाली हैं, तो मुझे उसका भी विरोध करना पड़ेगा। मैं इतना उदार या मूर्ख नहीं हूँ कि औरों की सहायता के लिए अपने देश की स्वतन्त्रता का बलिदान कर दूँ।" अतः इस योजना से सभी को अवगत हो गया कि इंग्लैण्ड की असली नीति क्या है। कांग्रेस जन अंग्रेजों के भारत छोड़ने की योजना के अन्तर्गत कार्यक्रम बनाने में व्यस्त हो गये।

'भारत-छोड़ो' आन्दोलन

महात्मा गाधी ने पूरी शक्ति के साथ भारत-छोड़ो आन्दोलन चलाने के निश्चय को स्पष्ट करते हुए घोषित किया, "मैं आप लोगों को एक छोटा-सा मंत्र बताए देता हूँ। उसे आप अपने अंतःकरण में लिख लीजिए और उसका जाप अपनी प्रत्येक सांस के साथ चलने दीजिए। वह मंत्र है '*करो या मरो*' *या* तो हम भारत को स्वतन्त्र कर देंगे या इस प्रयत्न में मर मिटेंगे। हम अपनी गुलामी सहन करते हुए जीवित नहीं रहेंगे। कांग्रेस के प्रत्येक सदस्य को चाहिए कि वह अपने देश को गुलामी से मुक्त करने के लिए जो संघर्ष शुरू किया जा रहा है, उसमें भाग ले और प्रतिज्ञा करे कि वह अपने देश की गुलामी को देखने के लिए जीवित नहीं रहेगा। भगवान् को अपने मन में साक्षी मानकर यह शपथ लीजिए। स्वतन्त्रता-लक्ष्मी नामर्दों को माला नहीं पहनाती।···यह एक खुल्लमखुल्ला विद्रोह है। इस संघर्ष में कुछ भी गोपनीय रखना पाप है। स्वतन्त्र मनुष्य गुप्त आन्दोलनों के झगड़े में नहीं पड़ा रहता। यह संघर्ष हमें बिलकुल खुल्लमखुल्ला करना है। इस संघर्ष में यदि हमारा प्रतिपक्षी हम पर गोलियाँ भी बरसाए तो वे हमारे सीनों में घुसनी चाहिएँ—पीठ में नहीं।"

गांधीजी के सन्देश से देश में चारों ओर विद्रोह की ज्वाला उभड़ पड़ी।

महात्मा गांधी, पंडित नेहरू, सरदार पटेल तथा अन्य कांग्रेस कार्यसमिति के सभी सदस्यों को गिरफ्तार करके अहमदनगर के किले में बन्द कर दिया गया। कांग्रेस के अन्य कार्यकर्त्ता गुप्त रूप से कार्य में लगे रहे। दिन-प्रतिदिन नेताओं की गिरफ्तारी के विरुद्ध क्रोध, घृणा और प्रतिहिंसा की भावना उत्पन्न हो गई। टेलीफोन काट दिए गये। समाचार-पत्रों पर भारी पाबंदियां थोप दी गईं। राष्ट्रीय पत्रों का प्रकाशन बन्द कर दिया गया।

सरकार ने सारी परिस्थिति को बल के प्रयोग से काबू करने की सोची। अश्रु-गैस, लाठी चार्ज की अपेक्षा गोली चलाना एक साधारण बात हो गई। 'भारत छोड़ो' नारा देश के कोने-कोने में गूंजने लगा। जनता इतनी उग्र हो गई कि उन्होंने रेलवे की लाइन उखाड़ दी, तार काट दिये, सरकारी इमारतों को आग लगाना आरम्भ कर दिया। वह समझते थे कि बहरे अंग्रेज को सुनाने के लिए, इन कार्यों का सहारा लेना अनिवार्य है, तभी वह भारत छोड़ने को तत्पर होंगे। पुलिस ने इस आन्दोलन को दबाने के लिए भयंकर अत्याचार किये, लेकिन जनता ने साहस नहीं छोड़ा। विद्यार्थियों ने इसमें बड़ी वीरता का प्रदर्शन किया। स्कूल और कालेज छोड़कर इस युद्ध का मार्ग-दर्शन किया। सरकार के सारे प्रयत्न विफल रहे। भारत रक्षा नियमों के अधीन लोगों को पकड़ कर जेलों में ठूंस दिया गया। सारे देश में एक लाख से अधिक बन्दी बनाए गये।

मोरारजी इस आन्दोलन में वल्लभ भाई का दाहिना हाथ बन गये। उन्होंने गुप्त-रूप में गुजरात में इस आन्दोलन का सन्देश घर-घर पहुँचाने में एड़ी-चोटी का जोर लगा दिया। गुजरात में प्रतिदिन कोई-न-कोई मोर्चा अवश्य लगता। अतः अगस्त १९४२ में मोरारजी को तीन वर्ष का कड़ा दण्ड दिया गया।

इस आन्दोलन में सभी देशी राज्यों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। सरकार का शासन-कार्य ठप्प हो गया। तीन मास तक यह आन्दोलन अत्यन्त भयंकरता से चलता रहा। सरकार ने इस प्रबल आग को जितना दबाना चाहा, वह उतनी ही प्रज्वलित होती रही। आखिर यह राष्ट्रीय आन्दोलन भारत के इतिहास में एक कीर्ति-स्तम्भ बन गया।

१९४६ के आम चुनावों में कांग्रेस की जीत

ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ने १९४५ में भारतीय समस्या को हल करने के लिए कुछ अन्य प्रस्तावों (जिनमें मुख्य कैबीनेट मिशन और अगस्त प्रस्ताव थे) की घोषणा की। कांग्रेस की कार्यसमिति ने इन प्रस्तावों को अस्पष्ट और असन्तोषजनक मानते हुए भी आगामी चुनाव निर्वाचन करने के लिए सात सदस्यों की एक केन्द्रीय कमेटी बनाई। इस समिति में चुनाव-घोषणा-पत्र निकालने का भी निर्णय किया गया।

इन चुनावों में कांग्रेसी पुनः केन्द्र तथा अधिकतर प्रान्तीय विधान-मण्डलों में भारी बहुमत से चुने गये। श्री बी० जी० खरे के नेतृत्व में मोरारजी को राजस्व-विभाग के अतिरिक्त गृह, पुलिस-विभाग भी सौंपे गये। मोरारजी गृह-विभाग के मन्त्री के रूप में कुशल प्रशासक सिद्ध हुए। इन्होंने अपनी योग्यता से सार्वजनिक जीवन के अतिरिक्त अनेक प्रशासनिक सुधार किये।

मोरारजी—१९५१ से १९६९ तक



पन्द्रह अगस्त १९४७ का दिवस भारत के इतिहास में एक पर्व समान है। इस रोज महात्मा गाँधीजी के सपनों का भारत दो सौ साल की गुलामी की जंजीरें तोड़कर स्वाधीनता की दहलीज पर खड़ा हुआ था। यद्यपि समस्त देश में हर्ष और उल्लास की लहर थी किन्तु भारत-विभाजन की कसक भी कम न थी। १४ अगस्त की रात्रि से भारतीय संविधान परिषद् ने सर्वोच्च सत्ता ग्रहण की।

मुख्य मन्त्री के रूप में

प्रभुत्व-सम्पन्न गणतन्त्र और स्वाधीन देश में भारतीय संविधान के अन्तर्गत १९५२ में प्रथम आम चुनाव हुए। बहुत विचार-विमर्श के पश्चात् मोरारजी को बम्बई राज्य (संगठित गुजरात और महाराष्ट्र) का नेतृत्व करने के लिए चुना गया। वे १९५६ में राज्यों के पुनर्गठन तक मुख्य मन्त्री के पद पर बने रहे।

सर्वप्रथम मोरारजी ने अपने मन्त्रि-मण्डल को बड़ी सूझ-बूझ से संगठित किया। इसमें इन्होंने केवल नौ मन्त्री रखे जिनमें से तीन मन्त्री गुजरात; चार महाराष्ट्र, एक बम्बई केन्द्र और एक कर्नाटक से थे। इसमें समस्त राज्य की प्रत्येक जाति को प्रतिनिधित्व मिला था। मुख्य मन्त्री के रूप में, मोरारजी ने माल-गुजारी तथा पुलिस-संगठन के क्षेत्र में अनेक दूरगामी सुधार किए। बहु-विवाह निषेधक कानून बनाया गया जिसके अधीन हिन्दुओं को एक से अधिक पत्नी रखने का निषेध किया गया। उन्होंने विभिन्न भूमि-सुधारों को कार्यान्वित किया।

मोरारजी देसाई का मत है कि जब तक गाँवों और कस्बों में रहने वाले निर्धन और शोषितों को समुचित जीवन व्यतीत करने का अवसर नहीं दिया जाता उस समय तक समाजवाद की बात सोचना व्यर्थ है। उन्होंने अपने दृढ़ सिद्धांतों को मूर्त रूप प्रदान करने के लिए अनेक प्रगतिशील कानून बनाए और उन्हें निष्ठापूर्वक लागू भी किया गया। इन नियमों में काश्तकारों के कष्टों को कम करना, नशाबंदी, शोषित जनता का सुधार इत्यादि की सर्वत्र सराहना हुई।

मोरारजी देसाई के मुख्य-मंत्रित्व-काल में ही बम्बई राज्य में भाषायी आधार पर जन-आन्दोलन प्रारम्भ हो गया था किन्तु मोरारजी इस विभाजन के पक्ष में न थे। जैसे-जैसे जन-आन्दोलन बल पकड़ता गया, केन्द्रीय सरकार को विभाजन की बात माननी पड़ी। बम्बई के विभाजन के फलस्वरूप उन्होंने मुख्य-मन्त्री के पद से त्याग-पत्र दे दिया। उनके मत-अनुसार गुजरात और महाराष्ट्र एक ही राज्य होना चाहिए था। इतना होने पर भी उन्होंने इस विभाजन का विरोध नहीं किया और वह निरन्तर गुजरात के मन्त्रि-मंडल के संगठन के लिए पूर्ण रूप से सहयोग देते रहे हैं।

केन्द्रीय मंत्री-मंडल

पंडित जवाहरलाल नेहरू मोरारजी देसाई के दृढ़ निश्चय, स्पष्टवादिता और निर्भीकता से अत्यन्त प्रभावित थे। उन्होंने मोरारजी देसाई को विशेष रूप से केन्द्रीय मन्त्री-मंडल में सम्मिलित होने को आमंत्रित किया। पहले तो मोरारजी ने बम्बई छोड़ने में असमर्थता प्रकट की परन्तु उनके अधिक आग्रह पर वह मुख्यमन्त्री का पद छोड़, केन्द्रीय मंत्री-मंडल में शामिल हो गए। अतः १४ नवम्बर १९५६ को उन्हें वाणिज्य और उद्योग-मन्त्री का कार्य-भार सौंपा गया। जैसे ही वित्त-मंत्रालय से श्री टी० टी० कृष्णमाचारी ने त्याग-पत्र दिया तो २२ मार्च १९५८ को उन्होंने वित्त-विभाग का कार्यभार संभाला।

पंडित जवाहरलाल नेहरू की एक यह विशेषता थी कि उन्हें विभिन्न विचार-धारा रखने वाले व्यक्तियों के साथ काम करना अच्छा लगता था। उनका मत था कि विविध विचारों के लोगों से कार्य में अधिक कुशलता और क्षमता बढ़ती है। इस काल में एक ओर श्री कृष्ण मेनन जैसे साम्यवादी थे, तो दूसरी ओर मोरारजी जैसे साम्यवाद के विरोधी। कैसा अद्भुत संगम था। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं

है कि पंडित नेहरू के आस-पास ऐसा जमघट हो गया जो मोरारजी को एक आँख भी न भाता था। उन्होंने मोरारजी को पीछे धकेलने की पूरी कोशिश की। उन्हें अमेरिका का पक्षपाती कहा गया किन्तु मोरारजी अपने उद्देश्य और आदर्श-वादिता से टस से मस न हुए। वह सदैव निरन्तर अग्रसर होते रहे। उन्होंने निष्पक्षता और उदारता का मार्ग अपनाया। वह कदापि गलत कार्य पर उंगली उठाने से न चूके थे।

मोरारजी को वित्त-मंत्रालय का भार गम्भीर वित्तीय-संकट-काल में सौंपा गया जब विदेशी मुद्रा का संकट गहरा हो रहा था। पाँच-वर्षीय योजना-निर्माण में खींचा-तानी चल रही थी। देश में मुद्रा-स्फीति बढ़ रही थी। उन्होंने द्वितीय योजना को ऐसे ढंग से आरम्भ करवाया जिससे अर्थव्यवस्था के तनाव को कम किया जा सके। गरीब और शोषित जनता के विकास के लिए अपेक्षित साधन जुटाने के लिए अप्रत्यक्ष करों को लगाने की व्यवस्था की गई। घाटे की वित्त-व्यवस्था की दरार को कम करने हेतु अधिक विदेशी सहायता तथा अन्य साधनों को जुटाने का उपाय किया गया। उनका प्रयत्न रहा कि सरकारी प्रशासन में मितव्ययिता लाई जाए। देश के विकास के लिए घाटे की अर्थव्यवस्था का कम सहारा लिया जाए। समाजवाद के उद्देश्य से उन्होंने धनी और विशेषाधिकार-प्राप्त वर्गों पर अधिक कर लगाने की योजना को कार्यरूप दिया।

मोरारजी देसाई ने आर्थिक आयोजन और मौद्रिक प्रशासन को कार्यान्वित किया। अकस्मात् चीनी आक्रमण के समय रक्षा और विकास-कार्यों की आवश्य-कताओं को पूर्ण करने के लिए बड़े परिमाण में राजस्व जुटाया। देश की अर्थ-व्यवस्था के लिए यह बड़ा कठिन समय था। भारतीय सीमाओं की किसी भी अवस्था में रक्षा करना अनिवार्य था। मोरारजी ने एक खूबसूरत ढंग में अर्थ-नीति को ऐसा रूप दिया कि उत्पादन की दर को कम किए बिना, सुरक्षा की आवश्यकता को सम्पन्न किया गया।

१९६२ में पुनः मोरारजी सूरत से लोकसभा के लिए निर्वाचित घोषित किए गए। पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व के मंत्रिमंडल में इन्होंने वित्त-मंत्रालय का कार्यभार संभाला। १९६६-१९६७ में प्रशासनिक सुधार-आयोग के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने प्रशासन को सुधारने के बोझ को उठाया ताकि सरकार की प्रशासन-पद्धति की कुशलता से पुनर्रचना की जा सके।

भारतीय प्रतिनिधि-मंडल का नेतृत्व

मोरारजी ने वित्त-मंत्रालय में बड़ी सूझ-बूझ के साथ कार्य किया। विकास और निर्माण-कार्य के साथ आय और सम्पत्ति की विषमताओं को कम करने का उपक्रम किया। उनका यह भी विश्वास है कि अर्थ-व्यवस्था के विकास के लिए उन लोगों को योगदान देना चाहिए जो ऐसा करने की स्थिति में है, तभी महात्मा गांधी जी के सपनों को साकार किया जा सकता है।

१९५९ में मोरारजी देसाई ने वित्तमन्त्री के रूप में दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा-कोष के गवर्नरों के बोर्ड के वार्षिक सम्मेलन और विकास-सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय बैंक के गवर्नरों के बोर्ड की मीटिंग में भारतीय प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व किया। १९५९ और १९६० में वाशिंगटन तथा १९६१ में वियना के उक्त सम्मेलनों में उन्हें भारतीय प्रतिनिधि मंडल का नेतृत्व करने का अवसर मिला। १९५९ में कामनवेल्थ की व्यापारिक एवं आर्थिक परिषद् तथा १९६० में लन्दन में कामनवेल्थ के वित्तमंत्रियों की परिषद् में उन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया।

सन् १९५९ में अमरीका, फ्रांस, जापान एवं स्विटजरलेंड इत्यादि देशों का व्यापक भ्रमण किया। इन देशों की सरकारों के साथ भारत के लिए सहायता और व्यापार के सम्बन्ध में संधियाँ कीं। १९६२ में जेनेवा में संयुक्त राष्ट्र संघ की आर्थिक एवं सामाजिक कल्याण परिषद् के ३४वें अधिवेशन में उन्होंने भाग लिया और उन्हें साथ ही यूरोपीय आर्थिक संघ के देशों का भ्रमण करने का अवसर भी मिला।

कामराज योजना के अन्तर्गत त्याग-पत्र

अगस्त १९६२ में 'कामराज योजना' आई। इस योजना के मूल सूत्रधार कामराज थे। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह था कि केन्द्र और राज्यों में लम्बे समय से महत्त्वपूर्ण पदों पर कार्य करने वाले व्यक्ति स्वेच्छा से अपने पद छोड़कर कांग्रेस संस्था के संगठन का कार्यभार संभालें, क्योंकि अन्य नेता जनता में पूरी तरह सरकारी योजनाओं के प्रति विश्वास उत्पन्न करने में विफल रहते हैं एवं सरकार को जनता की ओर से समर्थन नहीं मिल पाता। कांग्रेस-जन इस समय तक कांग्रेस संस्था और कांग्रेस सरकार को एक ही संगठन के दो पहलू

समझते हैं। दोनों का एक-दूसरे को शक्ति प्रदान करना अनिवार्य ही है। ऐसी उपयुक्त योजना को कौन निन्दा करता ?

अगस्त १९६३ में मोरारजी ने स्वेच्छा से पद त्याग दिया एवं सरकार से बाहर रहकर एकान्तिक रूप से कांग्रेस के कार्य में जुट गए। उन्होंने समय-समय पर एक सामान्य नागरिक की हैसियत से सरकार और प्रशासन की रचनात्मक आलोचना प्रस्तुत की। हालाँकि यह योजना अपने लक्ष्य से भटक गई। कामराज योजना के प्रति आलोचकों का यह तर्क रहा है कि इस योजना के पीछे केन्द्रीय मंत्रियों को निकालने का षड्यन्त्र था। विभिन्न मन्त्रियों के पद-त्याग पर, उन्हें दल का कोई कार्य न सौंपा गया। लेकिन मोरारजी लगभग चार वर्ष तक कांग्रेस पार्टी के कार्य में संलग्न रहे।

भारत के द्वितीय प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री का १९६६ में ताशकंद में देहान्त हो गया। श्री मोरारजी देसाई ने प्रधानमन्त्री पद के लिए संघर्ष किया। इनका मुकाबला श्रीमती इन्दिरा गाँधी जी के साथ था। कामराज ने इस बार भी मोरारजी का विरोध किया। इस चुनाव के लिए राज्यों के मुख्य-मंत्रियों की राय को प्रमुखता दी गई। वैसे भारत में प्रधानमन्त्री के पद के लिए ऐसी परम्परा न थी। दूसरी ओर मोरारजी के समर्थकों का मत था कि प्रधान मन्त्री चुनने का अधिकार केवल लोकसभा के सदस्यों तक ही सीमित है। चुनाव में मोरारजी अल्पमत में रहे।

१९६७ के चुनाव

१९६७के आम चुनाव में मोरारजी पुनः सूरत से लोकसभा के लिए चुने गए। यद्यपि लोक-सभा में कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत मिल गया था, लेकिन विधान सभाओं के आम चुनाव में कांग्रेस को भारी धक्का लगा। आठ प्रदेशों में कांग्रेस का ढांचा हिल गया और गैर-कांग्रेसी सरकारें बनीं। श्रीमती इंदिरा गांधी को सर्व-सम्मति से प्रधानमंत्री बनाया गया एवं मोरारजी देसाई को उप-प्रधानमन्त्री के साथ वित्त-विभाग सौंपा गया।

वित्तस्थिति अब भी संकट में थी। एक के बाद एक सूखे ने समस्त देश में अकाल-जैसी भयंकर स्थिति उत्पन्न कर दी थी। देश की अर्थ-व्यवस्था दलदल में घिरीथी। विदेशी सहायता की सम्भावनाएं धीमी दिखाई दे रही थीं।

मंहगाई और बेरोजगारी जोरों पर थी। चौथी पंचवर्षीय योजना का मामला खटाई में था। बढ़ती हुई मुद्रा-स्फीति से आवश्यक वस्तुओं की कीमतें आकाश को छूने जा रही थीं। गैर-कांग्रेसी मंत्रि-मंडल केन्द्रीय सरकार के कार्य में रुकावट बन रहे थे। यहाँ तक कि संविधान की मान्यता को भी खतरा पैदा हो रहा था। मजदूरों और किसानों में अशान्ति बढ़ रही थी—ऐसी विषम स्थिति में मोरारजी देसाई ने गहरी आशावादिता और आत्म-विश्वास पर अर्थ-व्यवस्था के मूल सिद्धान्तों का पुनर्निर्माण किया और उसे देश की परिस्थितियों के अनुसार क्रियान्वित करने के लिए साधन-स्रोत जुटाने का प्रबन्ध किया। उन्होंने अपने बजट-भाषण में इस अर्थ-व्यवस्था की समस्या की चुनौती पर इस प्रकार मत व्यक्त किया—'कोई भी वित्तमन्त्री पूर्ण भविष्य-दृष्टि अथवा निरपेक्ष बुद्धिमानी का दावा नहीं कर सकता, किन्तु मैं समझता हूँ कि स्थिति जितनी चुनौतीभरी है, उतनी ही आशापूर्ण भी। अतएव चुनौती का सामना करने के लिए समाज के सभी वर्गों को अधिकतम सहयोग, अनुशासन तथा कुछ सीमा तक आत्म-त्याग से काम लेना चाहिए" अर्थात् मोरारजी ने अपने जीवन के अनुभव के आधार पर वित्त की भीषण समस्याओं का समाधान निकाला और काफ़ी हद तक देश की अर्थ-व्यवस्था में सुधार हुआ।

जुलाई १९६९ में प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गाँधी ने मोरारजी से वित्त-मंत्रालय ले लिया। श्री देसाई ने अनुभव किया कि इससे उनके आत्मसम्मान को गहरी ठेस पहुँची है अतः उन्होंने उप-प्रधानमन्त्री पद से भी त्यागपत्र दे दिया।

उपवास

मोरारजी देसाई महात्मा गांधी जी की तरह सार्वजनिक हित के लिए उपवास का तर्क देते हैं। वह कहते हैं कि उपवास का अर्थ यह है कि जब सरकार लोकतन्त्र के मार्ग से हट जाये तो सरकार का ध्यान इस ओर केन्द्रित करने के लिए उपवास का प्रयोग किया जा सकता है। उन्होंने सर्वप्रथम उपवास १९५६ में महागुजरात के गठन के सम्बन्ध में हुए आन्दोलन के विरोध में किया। पुनः अहमदाबाद में १९६९ में साम्प्रदायिक दंगों के पश्चात् सद्भाव और आत्मशुद्धि के लिए दस दिन के उपवास का प्रयोग किया।

विरोधी नेता—मोरारजी एवं राजनीतिक गतिविधियाँ

(१९६९ से १९७५ तक)



१९६९ का वर्ष कांग्रेस के लिए अशुभ था। संसद में दो-तिहाई सदस्य होने पर भी कांग्रेसी सदस्यों का आपस में मतभेद था। एक ओर प्रगति के सामान्य पथ पर चलने वाले और दूसरी ओर समाजवादी विचार-धारा वाले। दोनों एक-दूसरे को खींच रहे थे। कांग्रेस-जन, महात्मा गांधी एवं लोकतन्त्र के सिद्धान्तों के विपरीत जा रहे थे। यही नहीं, इस मतभेद को कम करने का प्रयास नहीं किया गया, यह मतभेद कम होने की अपेक्षा बढ़ता ही गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी जी ने श्री मोरारजी देसाई पर आरोप लगाया कि वह अपने समाजवाद के दृष्टिकोण से हट गए थे। उन्होंने वित्त-विभाग मोरारजी से ले लिया। मोरारजी अनुभव करने लगे कि ऐसा करने से उनके स्वाभिमान को ठेस पहुँची है, अतः उन्होंने उप-प्रधानमन्त्री के पद से भी त्याग-पत्र दे दिया।

इसी बीच राष्ट्रपति का चुनाव आ गया। कांग्रेस दल के अधिकृत उम्मीदवार श्री नीलम संजीव रेड्डी के विरुद्ध श्रीमती इन्दिरा गांधी जी ने श्री व्यंकट गिरि वराहगिरि को मैदान में लाकर कांग्रेस-जैसी राष्ट्रीय संस्था को दो भागों में विभाजित कर दिया। मोरारजी ने संगठन कांग्रेस का समर्थन किया जबकि बहुत से वरिष्ठ कांग्रेसजनों ने श्रीमती इन्दिरा गांधी वाली कांग्रेस का नेतृत्व स्वीकार किया। संगठन कांग्रेस को विपक्ष में बैठना पड़ा। संगठन कांग्रेस ने मोरारजी देसाई को अपना नेता चुना।

बंगला देश का उदय एवं लोकसभा व विधान सभाओं के आम चुनाव

दिसम्बर १९७१ में भारत ने पाकिस्तान से बंगला देश को मुक्त कराने के लिए युद्ध को नैतिक समर्थन दिया और एक लाख से अधिक शरणार्थियों को भारत में शरण देने के हेतु श्रीमती इन्दिरा गांधी के चमत्कारिक व्यक्तित्व एवं प्रगतिशील नारों ने विपक्ष को ध्वस्त कर दिया। अभी इन्दिरा गांधी जी के नाम की आंधी धीमी न हुई थी कि लोकसभा और विधान-सभाओं के आम चुनावों का समय आ गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी के क्रान्तिकारी नारे 'लोग कहते हैं इन्दिरा हटाओ, मैं कहती हूँ गरीबी हटाओ' ने लोगों में नई आशा का संचार किया। इसके फलस्वरूप कांग्रेस को कुल ४३·६४ प्रतिशत के लगभग मत मिले। संगठित कांग्रेस को सिर्फ १०·५६ प्रतिशत मत। इन्दिरा गांधी वाली कांग्रेस को ४४२ सीटों में से ३५० स्थान मिले और पुरानी कांग्रेस को केवल १६ स्थान। अन्य राजनीतिक दलों की स्थिति पहले चुनावों जैसी ही रही। इसके साथ ही राज्यों की विधान सभाओं के चुनाव में नई कांग्रेस ही विजयी हुई। आम जनता की राय यह थी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में ही बैंक राष्ट्रीयकरण, राजाओं के विशेषाधिकार-उन्मूलन (Abolution of privy purses) और असामान्य पिछड़ी जातियों का कल्याण इत्यादि अलौकिक सपनों को साकार किया जा सकता है। इससे संगठन कांग्रेस का विश्वास लुप्त हो गया एवं विपक्ष के बड़े-बड़े नेताओं का पत्ता कट गया।

आर्थिक संकट

पिछले तीन-चार वर्षों में देश को भीषण आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा। अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संकट से भारत की अर्थ-व्यवस्था पर और भी गहरा प्रभाव हुआ। प्रतिदिन काम में आने वाली आवश्यक वस्तुओं की कीमतें आकाश को छूने लगीं। बेरोजगारी बेकाबू हो गई जबकि दूसरी ओर उत्पादन गिरने लगा। विकास की दर गिर रही थी। मुद्रा-स्फीति की दर पिछले दशक की तुलना में तीन गुनी बढ़ गई। काले धन का प्रसार व्यापक पैमाने पर होने लगा। भ्रष्टाचार और शोषण का तो क्या कहना? वह भी जटिल समस्या को बढ़ाने में सहयोग देने लगा। औद्योगीकरण की दर ५० प्रतिशत कम हो गई। महँगाई ने सामान्य जन-जीवन को बहुत प्रभावित किया। रुपये का मूल्य

घटकर २९ पैसे मात्र रह गया। सारे देश में असन्तोष व्याप्त होने लगा। अकुशलता, अनुशासनहीनता तथा संसदीय प्रणाली की धीमी गति के कारण श्रीमती इन्दिरा गाँधी का नारा 'गरीबी हटाओ' वरदान की अपेक्षा अभिशाप प्रतीत होने लगा। प्रगतिशील योजनाओं और विभिन्न आर्थिक विकास-कार्यक्रमों के प्रति लोगों में अविश्वास और असन्तोष फैलने लगा। देश का सामान्य नागरिक महँगाई और धोखेबाजी की चक्की में पिसने लगा।

जयप्रकाश नारायण का बिहार-आन्दोलन एवं भ्रष्टाचार को चुनौती

लोकनायक जयप्रकाश नारायण स्वतन्त्रता-सेनानी तथा वयोवृद्ध नेताओं में से एक हैं। १९७२ में वह व्यावहारिक रूप से राजनीति से बिल्कुल अलग हो गए थे। उन्होंने न केवल राजनीति से ही पृथक् होने का संकल्प लिया था, बल्कि अन्य सभी दूसरी अनेक संस्थाओं से स्तीफा भी दे दिया था। देश में पनप रहे भ्रष्टाचार, महँगाई, वस्तुओं का अभाव, बेरोजगारी से उत्पन्न असन्तोष, दोषपूर्ण शिक्षा, भ्रष्ट चुनाव-प्रणाली तथा हिंसा की गतिविधियों को दूर करने के लिए एक सुलझे हुए नेतृत्व और अनुशासन की आवश्यकता थी। यह केवल बिहार और गुजरात के दीन-दुखियों की कहानी न थी, बल्कि समूचे देशवासियों के दुःख-दर्द की दासताँ थी। ऐसे कष्टमय समय की पुकार सुनकर जयप्रकाश नारायण जी चुप न बैठ सके, एक विस्फोट के समान वे जनता के सम्मुख ऐसे आए कि देश का कोना-कोना आश्चर्यचकित रह गया। जनता ने उन्हें 'लोकनायक' नाम से पुकारा। प्रत्येक स्थान पर जनता ने उन्हें सम्मान दिया।

बिहार-आन्दोलन का वास्तविक सूत्रधार तो युवा-शक्ति थी जो गुजरात-आन्दोलन की रूपरेखा पर चल कर अपने प्रान्त में भ्रष्ट-व्यवस्था एवं अन्य कुरीतियों को बदलने के लिए कटिबद्ध थी। समय की पुकार देखते हुए मोरार जी देसाई और जयप्रकाश नारायणजी ने विद्यार्थियों में राजनीतिक जागृति उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त योगदान दिया। इसके फलस्वरूप फरवरी १९७४ में छात्रों ने सशक्त युवा संगठन 'अखिल भारतीय विद्यार्थी-परिषद्', 'पटना विश्वविद्यालय-छात्र संघ' इत्यादि अनेक संगठन बना लिए। संयुक्त प्रयासों के साथ 'बिहार-छात्र नेता सम्मेलन' हुआ। अपनी माँगों को मुख्य रखते हुए, समिति की ओर से २७ फरवरी को बिहार के मुख्यमंत्री के निवास-स्

भूख-हड़ताल और विशाल प्रदर्शन तथा १८ मार्च १९७४ को बिहार विधान-सभा का घेराव करने का निर्णय किया गया। इस प्रदर्शन में 'गुजरात की जीत हमारी है, अब बिहार की बारी है' मुख्य नारा था। इस प्रदर्शन से जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो गया। इसी बीच ३ फरवरी १९७४ को लखनऊ में छात्रों को संबोधित करते हुए जयप्रकाश नारायण ने कहा, 'इतिहास बदलने के लिए दूसरा १९४२ का आन्दोलन समीप दिखाई दे रहा है। एक अन्य सम्मेलन में उन्होंने कहा, 'आपके हर कदम पर शरारती तत्त्व आपको बदनाम करने की चेष्टा करेंगे, आपके आन्दोलन की तस्वीर को धूमिल बनाने के लिए वे किसी भी सीमा तक जा सकते हैं, लेकिन यह समय कोई भड़कने का नहीं, उत्तेजना का नहीं और न ही आपको किसी हिंसा का सहारा लेना है।'

इस समय तक देश की राजनीति में लोकनायक जयप्रकाश नारायण का नया नारा 'सम्पूर्ण क्रांति अब नारा है, भावी इतिहास हमारा है' प्रेरणामय एवं शान्तिमय संघर्ष का स्पष्ट संकेत बन गया। ८ अप्रैल १९७४ को जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में बिहार सर्वोदय-मंडल, शान्ति सेना और छात्र-संघर्ष-समिति के संयुक्त प्रयत्नों से पटना में एक मौन जुलूस आयोजित किया गया। शान्तिपूर्ण ढंगों में विश्वास करने वाले, सभी धर्मों में समान निष्ठा, भ्रष्टाचार-मुक्त समिति; समाज-कल्याण और हित; महँगाई, भ्रष्टाचार, बेरोज-गारी और वर्तमान शिक्षा के प्रति आमूल परिवर्तन — सभी वर्गों ने मिलकर इस मौन जुलूस में बिहार की धरती पर एक ताजगी उँडेलकर रख दी। ऐसा लगा मानो इस हवा के एक झोंके ने जनता-जनार्दन को घुटन से मुक्ति दिला दी हो। इस जुलूस की विशेषता यह थी कि इसमें चीखती-चिल्लाती आवाजें नहीं थीं, ऊँचे और गगनचुंबी नारे न थे केवल मौन लिखित नारे ही थे—'हमला चाहे जैसा हो, हाथ हमारा नहीं उठेगा!' 'महँगी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार—सत्ता ही है जिम्मेदार!' 'लाठी, गोली हिंसा, लूट—किसी को इनसे मिले न छूट!' यह मौन अभिव्यक्ति का जुलूस भारत के इतिहास में प्रथम अहिंसा का सर्वोपरि और सर्वोत्तम प्रतीक था। ६ अप्रैल को छात्रों ने जयप्रकाश नारायण को 'लोक-नायक' की उपाधि से विभूषित किया।

अब आन्दोलन का स्वरूप बिल्कुल अलग-सा हो गया था। २० अप्रैल को जयप्रकाश नारायण जी ने कहा, 'यह आन्दोलन किसी दल का समर्थक या

विरोधी नहीं है, बल्कि यह एक निर्दलीय, निरपेक्ष आन्दोलन है जो अपने मूल-भूत उद्देश्यों की प्राप्ति तथा समाज की एक नई रचना के लिए चल रहा है।' इसी प्रकार ४ जून को उन्होंने कहा, 'यह क्रांति है मित्रो ! और सम्पूर्ण क्रांति है। यह कोई विधान सभा विघटन का ही आन्दोलन नहीं है। वह तो एक मंजिल है जो रास्ते में है, दूर जाना है, दूर जाना है। जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में—अभी न जाने कितने मीलों इस देश की जनता को जाना है, उस स्वराज्य की प्राप्ति करने के लिए, जिसके लिए देश के हजारों-लाखों जवानों ने कुर्बानियाँ की हैं...यह संघर्ष केवल सीमित उद्देश्यों के लिए नहीं हो रहा है। इसके उद्देश्य तो बहुत दूरगामी हैं। भारतीय लोकतन्त्र को वास्तविक तथा सुदृढ़ बनाना, जनता का सच्चा राज्य कायम करना, समाज से अन्याय, शोषण आदि का अन्त करना, एक नैतिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्रांति करना और अन्ततोगत्वा नया भारत बनाना है। मित्रो ! यह सम्पूर्ण क्रांति है।'

आन्दोलन का कार्यक्रम निरन्तर चलता रहा। सरकार ने जयप्रकाश नारायण के आन्दोलन को कुचलना चाहा परन्तु यह तो आम जनता का आन्दोलन बन गया था। बिहार एसेम्बली विघटन योजना के अन्तर्गत सत्याग्रह आरम्भ किया गया। इसमें सभी विपक्षियों ने मिलकर काम किया और 'विधान सभा भंग करो' की अपेक्षा 'विधान सभा भंग करेंगे' नारा आम विषय बन गया। असंख्य युवक-युवतियाँ अपनी शिक्षा को तिलांजलि देकर इस आन्दोलन की आधार-शिला बन गए। क्रान्ति-पथ की ओर अग्रसर होते हुए यह आन्दोलन एक आन्दोलन न रहकर एक वेगवती सरिता-समान गतिशील हो गया और इससे देश की राजनीति में हलचल आरम्भ हो गई। यह आंदोलन केवल बिहार और गुजरात तक ही सीमित नहीं रहा, बल्कि अन्य राज्य पंजाब, हरियाणा, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश में भी फैल गया। जयप्रकाश नारायण ने इस सम्पूर्ण क्रान्ति को राष्ट्रव्यापी रूप देने हेतु विभिन्न राज्यों का दौरा किया और प्रत्येक प्रदेश में जनता ने उनका भव्य स्वागत किया।

पंजाब के लुधियाना नगर में लाखों व्यक्तियों के समारोह में जयप्रकाश नारायण जी ने अपना दृष्टिकोण रखते हुए कहा—"प्रधानमन्त्री लोकतन्त्र का मुखौटा पहन कर जनता की आवाज को दबाना चाहती हैं, वे तानाशाही के मार्ग का अनुकरण करने लगी हैं। वे अपने विरोधियों को सहन नहीं कर सकती

जबकि लोकतन्त्र में यह बुनियादी बात है……" एक अन्य रैली में उन्होंने अपना विचार व्यक्त करते हुए कहा कि, "मैं जन-शक्ति को एक ऐसी तलवार बनाना चाहता हूँ जो हमेशा शासकों के सिर पर लटकती रहे और जिसके कारण वे मतदाताओं के प्रति गैर-जिम्मेदार न हो पाएँ।"

६ मार्च १९७५ के जन-मार्च, प्रदर्शन में लाखों व्यक्तियों ने भाग लिया। इस दिन दिल्ली के प्रमुख बाजार बन्द थे। इस क्रांति-यात्रा में भाग लेने बिहार, गुजरात, राजस्थान, तमिलनाडू, महाराष्ट्र, आंध्र, असम, जम्मू-कश्मीर, पंजाब, हिमाचल, हरियाणा, दिल्ली इत्यादि सभी प्रान्तों से असंख्य प्रदर्शनकारी आए हुए थे। इसी दिन विपक्ष के अनेक नेताओं—जिनमें अशोक मेहता, अटल बिहारी वाजपेयी, राजनारायण, पीलू मोदी इत्यादि के साथ जाकर लोकसभा और राज्यसभा के अध्यक्षों को जनता की ओर से एक स्मरण-पत्र दिया गया। इस प्रकार यह आन्दोलन जन-जागृति और लोक-शक्ति में चेतना के विकास में मील का पत्थर बन गया और आपात्-कालीन स्थिति घोषित करने के लिए एक निश्चित पृष्ठ-भूमि का काम किया। इसी बीच कांग्रेस के एक पुराने सदस्य ने श्रीमती इन्दिराजी को सलाह दी कि 'आंतरिक आपात् स्थिति' ही इस आन्दोलन को कुचलने का एकमात्र साधन है एवं यह आन्दोलन आपात्कालीन स्थिति की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी बन गई।

श्री ललितनारायण मिश्र की हत्या

३ जनवरी १९७४ को श्रीमती इन्दिरा गांधी जी के सहयोगी रेल-मन्त्री श्री ललितनारायण मिश्र जी को समस्तीपुर में नई रेलवे लाइन के उद्घाटन के लिए बुलाया गया, लेकिन मंच पर अचानक बम-विस्फोट से उनकी मृत्यु हो गई। मृत्यु से पूर्व श्री ललितनारायण मिश्र जी का राजनीतिक जीवन कुछ विवादग्रस्त हो गया था किन्तु सद्भावना और व्यवहार से समाज में उनकी निरन्तर प्रतिष्ठा बनी हुई थी। मिश्रजी की हत्या पर सभी राजनीतिक संगठनों के लोगों ने खुली और निष्पक्ष जाँच कराने की माँग की। कांग्रेसी नेताओं ने इस हत्या के लिए बिहार-आन्दोलन को जिम्मेदार ठहराना आरम्भ कर दिया एवं यह बात आम हो गई कि विपक्षी मिश्रजी की तरह श्रीमती इन्दिरा गांधीजी की हत्या का षड्यन्त्र रच रहा है। प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने एक शोक सभा

ने कहा—"श्री मिश्र की हत्या उस खतरनाक षड्यन्त्र का पूर्वाभ्यास है जिसका उद्देश्य प्रजातन्त्र को समाप्त करके देश को बदनाम करना है।"

इस पर जनसंघ के श्री नानाजी देशमुख ने कहा, "केन्द्रीय खुफिया विभाग सी० बी० आई० द्वारा की गई जाँच से जनता को आश्वस्त नहीं किया जा सकेगा। जाँच-कार्य ऐसे आयोग को सौंपा जाना चाहिए जिसका अध्यक्ष राष्ट्रीय महत्व का हो तथा जिसमें जनता को विश्वास हो।"

भारतीय लोकदल के नेता प्रो० बलराज मधोक ने अपने एक वक्तव्य में कहा—"कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्षों द्वारा श्री ललित नारायण मिश्र की हत्या को फासिस्टों और प्रतिक्रियावादियों को दोषी बताने से इस नृशंस काण्ड में सरकार का हाथ होने की आम धारणा की पुष्टि होती है।"

इसी भाँति जे० पी० ने ललित नारायण मिश्र की हत्या को बिहार-आन्दोलन के साथ जोड़ने का खंडन करते हुए कहा—"श्री मिश्र की हत्या को मेरे आन्दोलन के साथ जोड़ना न्यायसंगत नहीं है। जो लोग ऐसा कर रहे हैं, उनके कुछ राजनीतिक स्वार्थ हो सकते हैं, जबकि मेरे आन्दोलन में हिंसा को कहीं कोई स्थान नहीं है।"

श्री ललित नरायण मिश्र की हत्या का कोई भी कारण हो परन्तु इस बात को बहुत गम्भीरता से लिया गया। यहाँ तक कुछ बुद्धिजीवी निश्चित रूप में सोचने लगे कि आपातकालीन स्थिति में अब देरी नहीं है। श्रीमती गाँधी के निकटतम सहयोगी और विशेष सलाहकार आपात्कालीन स्थिति के पक्ष में तर्क देने लगे कि यही उचित समय है। उनका मत था कि इसके दो लाभ संभव हैं। एक तो देश में शान्ति का वातावरण हो जाएगा दूसरा विपक्ष के देशव्यापी आन्दोलन का मुकाबला भी सुदृढ़ता से किया जा सकेगा।

सर्वोच्च न्यायाधीश श्री रे की हत्या का षड्यन्त्र ?

अभी श्री ललित नारायण मिश्र की हत्या की बात शान्त न हुई थी कि अचानक सर्वोच्च न्यायाधीश श्री ए० एन० रे अपनी कार से घर लौट रहे थे कि मार्ग में चौराहे के समीप किसी ने कार पर बम फेंक कर उनकी हत्या करनी चाही। जिससे कांग्रेस के सत्तारूढ़ दल का सिंहासन हिल गया एवं वह किसी भी समय किसी अप्रिय घटना की उम्मीद करने लगे।

उत्तरप्रदेश और गुजरात के मध्यकालीन चुनाव

१९७४ में उत्तर प्रदेश में मध्यकालीन चुनावों से यह बात स्पष्ट होने लगी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी जी के आकर्षक नारे एवं छल-योजना वाले ढंग विफल और एक दिखावा-मात्र हैं। इन चुनावों में विशेष बात यह हुई कि सांप्रदायिक और अल्पसंख्यक वर्ग का सहयोग भी कांग्रेस की ओर कम होने लगा। इन चुनावों में अथाह धन और राज्य की सभी प्रकार की सहायता और सत्ता का प्रयोग करने के उपरान्त भी कांग्रेस को मुंह की खानी पड़ी। राजनीतिक पंडित इससे अनुमान लगा रहे थे कि शीघ्र भविष्य में होने वले चुनावों में कांग्रेस अवश्य विफल होगी।

उत्तर प्रदेश के चुनाव एवं जयप्रकाश नारायण जी की बिहार-आन्दोलन की विचार-धारा और लोकप्रियता से प्रभावित होकर गुजरात में भंग विधान-सभा के चुनावों की मांग को दुहराया गया। इस आन्दोलन का नेतृत्व श्री मोरारजी देसाई ने किया। मांग अस्वीकार होने पर उन्होंने अपना अनशन आरम्भ कर दिया। पांचवें दिन के उपवास के उपरान्त गुजरात में हिंसा की लहर भड़क उठी। राज्य के अनेक कांग्रेस-विधायकों ने सामूहिक रूप में त्याग-पत्र देने आरम्भ कर दिए। पहले तो श्रीमती इन्दिरा गांधी मध्यकालीन चुनावों के लिए न मानीं, लेकिन मोरारजी के उपवास के सातवें दिन बेवस हो कर गुजरात विधान सभा के चुनाव करवाने की मांग के सम्मुख इन्दिरा सरकार को झुकना पड़ा।

१२ जून—इलाहाबाद हाईकोर्ट का ऐतिहासिक फैसला

भारत के राजनीतिक इतिहास में १२ जून १९७५ का अपना विशेष ही स्थान है। इस रोज इलाहाबाद हाईकोर्ट के न्यायाधीश श्री जगमोहनलाल सिन्हा ने लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम १९५१ की धारा १२३ (७) के अन्तर्गत श्रीमती इन्दिरा गांधी के विरुद्ध चुनाव लड़ने वाले श्री राजनाराण की याचिका पर रायबरेली संसदीय क्षेत्र पर अपना ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए श्रीमती गांधी का निर्वाचन रद्द कर दिया और ६ वर्ष की कालावधि के लिए सब तरह के चुनावों के लिए अयोग्य घोषित कर दिया। परन्तु इसके साथ ही न्यायाधीश ने अपने आदेश को २० दिन तक लागू न करने की छूट भी दे दी।

हमारे संविधान में स्वतन्त्र और निष्पक्ष चुनाव के लिए कई प्रकार के कानूनी प्रावधान तथा व्यवस्थाएँ की गई हैं। इसी प्रतिनिधित्व अधिनियम १९५१ के सातवें भाग के प्रथम अध्याय के अनुसार उन पर चुनाव में भ्रष्टाचार के दो आरोप सिद्ध हुए। प्रथम यह दोष था कि जब श्रीमती गांधी अपने चुनाव-क्षेत्र रायबरेली में भाषण देने गई तो उत्तर प्रदेश की सरकार ने राजकीय पैसे से उनकी चुनाव-सभा का प्रबन्ध किया था, दूसरे इन्दिराजी ने सरकारी सेवक श्री यशपाल कपूर की सेवाओं का उपयोग अपने व्यक्तिगत चुनाव-कार्य के लिए किया था। इस फैसले के पश्चात् श्रीमती इन्दिरा गांधी जी को प्रधानमन्त्री के पद से हट जाना चाहिए था परन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। एक ओर आर्थिक तथा राजनीतिक स्तर पर वह पहले ही दुर्बल हो गई थीं। इस उच्च न्यायालय के निर्णय ने उनकी गिरती हुई प्रतिष्ठा को भी मिट्टी में मिला दिया। एक महान् नेता के रूप में उनका प्रभाव रातों-रात नष्ट हो गया और उनकी अधीनस्थ सम्पूर्ण सत्ता भी उसे पुनः से स्थापित करने में असमर्थ रही। राजकीय स्तर पर श्रीमती गांधी के समर्थन में अनेक प्रदर्शन आयोजित किए गए किंतु सारे प्रयास विफल रहे। अन्दर-ही-अन्दर विरोध की ज्वाला प्रबल होती गई। अब कठोर कदम उठाये जाने के अतिरिक्त अन्य कोई भी उपाय न रह गया था।

आन्तरिक फूट

सम्भवतः इस समय तक कांग्रेस पार्टी में आन्तरिक रूप में एक गंभीर विद्रोह चल रहा था। सत्ता के इधर-उधर कुछ ऐसे लोगों का जमघट लग गया था, जिन्होंने सत्ता का प्रयोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए करना आरम्भ कर दिया। उनके लिए संगठन व्यक्तिगत भावना से ऊपर न रह गया था। पार्टी के कुछ महारथियों ने यह अनुभव किया कि देश में जो हो रहा है, वह उचित नहीं है। दूसरी ओर महत्वाकांक्षी नेता सारी सत्ता अपने हाथों में ले लेने को आतुर थे। यही लोग विद्रोह को भड़का रहे थे। इस प्रकार आपात्कालीन स्थिति घोषित करना ही शेष रह गया था।

इस प्रकार ये सभी घटनाएँ—एक-दूसरे के साथ मिल-जुल कर भविष्य की आपात्कालीन स्थिति घोषित करने की जिम्मेदार बनीं। वैसे १२ जून के

इलाहाबाद न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णय ने आग पर तेल का काम किया प्रतिपक्ष ने एक बयान में श्रीमती इन्दिरा गांधीजी से त्याग-पत्र देने की मांग की। श्रीमती इन्दिरा गांधीजी ने इस मांग को अस्वीकार करके इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर करने की बात कही। इस पर जयप्रकाश नारायण जी ने यहाँ तक कह दिया कि जिस व्यक्ति पर भ्रष्टाचार का कलंक लग गया हो, उसका प्रधानमन्त्री के पद पर रहना उसकी नैतिकता और प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है, इसलिए श्री मोरारजी देसाई ने विपक्ष के साथ मिलकर इस मांग को दुहराया कि जब तक तक सर्वोच्च न्याया-लय का निर्णय नहीं हो जाता और वह इन्दिराजी को इलाहाबाद हाईकोर्ट के भ्रष्टाचार के आरोपों से मुक्त नहीं कर देता, तब तक प्रधानमन्त्री पद पर श्रीमती इन्दिरा गांधीजी को काम नहीं करना चाहिए।

विपक्ष द्वारा इलाहाबाद के निर्णय की उपमा 'इण्डियन वाटरगेट' कांड से दी जाने लगी। अतः चुनाव-याचिका के परिणाम को लेकर बार-बार नैतिकता की बात दुहराई गई। छात्र-आन्दोलन के पास भी कोई अन्य उत्साहजनक उप-लब्धि नहीं थी। ऐसा अवसर फिर कब हाथ आना था। यह बात चल निकली कि राजनीतिक शिष्टाचार को पालन करने हेतु श्रीमती गांधीजी को त्याग-पत्र दे देना ही उपयुक्त है। संसद का पिछला अधिवेशन भी बड़े हंगामों में समाप्त हुआ था। उसमें तरह-तरह के काण्डों की चर्चा चलाई गई थी, विशेषकर लाइसेंस-काण्ड! इन्दिराजी ने श्री जगजीवनराम, श्री यशवंतराव चव्हाण और सरदार स्वर्णसिंह से अलग-अलग परामर्श लिया कि त्याग-पत्र दिया जाये या न दिया जाये। कांग्रेस के नेताओं और समर्थकों को लगा कि यदि श्रीमती गांधी ने त्याग-पत्र दे दिया तो उनका सिंहासन भी हिल जाएगा। उन्होंने इन्दिराजी को त्यागपत्र न देने की सलाह दी और कहा कि याचिका का मामला केवल तक-नीकी है और सुप्रीम कोर्ट का निर्णय उनके पक्ष में ही जाएगा। यह सब कोरी कल्पना ही थी। कांग्रेस जनों ने इन्दिराजी के नेतृत्व में अपनी आस्था व्यक्त करने के लिए विभिन्न समारोह और रैलियाँ आयोजित करने की सोची। इसका प्रभाव सर्वोच्च न्यायालय पर भी पड़ेगा।। उन्होंने कहना आरम्भ कर दिया—'श्रीमती गांधी प्रधानमन्त्री बनी रहेंगी। हमारा निश्चित और सुविचा-रित मत है कि देश की एकता, सुरक्षा और विकास के लिए उनका मार्गदर्शन

नेतृत्व अपरिहार्य है। इस बीच देश के अनेकानेक नगरों और कस्बों में कांग्रेस दल द्वारा हजारों लोगों ने प्रदर्शन आयोजित किए। इन प्रदर्शनों का मुख्य नारा था 'हम इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को स्वीकार नहीं करेंगे' इस बात से यह स्पष्ट हो गया था कि यदि उच्च न्यायालय ने भी इलाहाबाद हाईकोर्ट के फैसले की पुष्टि की तो उसे भी अस्वीकार कर दिया जाएगा।

२० जून को नई दिल्ली में विशाल प्रदर्शन का आयोजन किया गया, जिसमें श्रीमती इन्दिरा गांधी जी ने कहा कि सेवा उनके वंश की परम्परा रही है। यह प्रथम अवसर था कि इन्दिराजी ने किसी सार्वजनिक सभा में भावात्मक शब्दों में अपने वंश का उल्लेख किया। कांग्रेस-प्रधान श्री बरुआ जी तो यह कहने से भी न चूके "भारत इन्दिरा है, और इन्दिरा भारत है।"

भावना के धरातल पर बरुआ जी का तर्क अच्छा था, क्योंकि उन्होंने पंडित नेहरू के निधन पर 'जवाहर के बाद कौन ?' वाली बात को उछालने के प्रयास समान ही यह बात कही थी। कांग्रेस-जनों के इन्दिराजी के नेतृत्व में अटूट विश्वास से यह स्पष्ट हो गया था कि श्रीमती इन्दिरा गांधी त्याग-पत्र नहीं देंगी। एक ओर इन्दिराजी उच्चतम न्यायालय में अपनी पैरवी करने के लिए बम्बई के कुशल वकील नानी ए पालखीवाला से सम्पर्क करने लगी, दूसरी ओर इस बात पर भी विचार-विमर्श किया जाने लगा कि यदि वे अस्थायी तौर पर (उच्चतम न्यायालय के निर्णय तक) त्याग-पत्र दे भी दें तो उत्तराधिकारी कौन हो ? इस सम्बन्ध में कई एक नामों की चर्चा हुई। श्रीमती गांधी ने भी कच्ची गोलियाँ न खेली थीं। उन्होंने सुझाव रखा कि 'त्यागपत्र देने पर उन्हें अपना उत्तराधिकारी चुनने का अधिकार मिलना चाहिए' इस बात पर कांग्रेस पार्टी की कार्यसमिति के कुछ सदस्य एवं मन्त्रीमंडल के कई सदस्यों ने अप्रत्यक्ष रूप से विरोध किया।

सारा मामला खटाई में पड़ गया। इसमें तनिक भी सन्देह न था कि इन्दिराजी जनता जनार्दन की नेता थी, आम जनता में सम्मान था किन्तु न्यायालय का निर्णय भी कम महत्त्वपूर्ण न था। इन्दिराजी के समर्थक प्रत्येक प्रान्त से जनता की भीड़ एकत्र करके प्रधानमन्त्री की कोठी पर ले जाने लगे। नारे गूंजने लगे—'त्यागपत्र न दीजिए।' उनका मत था कि जनता का फैसला राष्ट्र हित और अदालत से ऊपर है। इस पर कई कांग्रेस-जनों ने विरोध

तो इन्दिराजी ने कहा कि यह प्रदर्शन हम थोड़े ही करा रहे हैं, यह तो जनता स्वेच्छा से ही कर रही है। विपक्ष के सम्मुख श्री मोरारजी तथा अन्य नेताओं ने त्याग-पत्र की मांग का खुलेआम समर्थन किया कि नैतिक मूल्यों की रक्षा के लिए त्याग-पत्र दे देना ही इन्दिराजी को शोभनीय है। श्री राजनारायण के वकील श्री शान्तिभूषण ने स्पष्ट शब्दों में कहा—'न्यायालय संविधान की आत्मा का रक्षक है। इसलिए यदि कोई व्यक्ति न्यायालय के समक्ष सत्य भाषण नहीं करता तो उसे सर्वोत्तम पद पर कार्य करने की अनुमति देना देश के लिए अच्छी परम्परा नहीं है।'

इस राजनीतिक व्यवस्था के उतार-चढ़ाव की परिस्थितियों में सभी विपक्षी दलों ने २६ जून से ५ जुलाई तक देश में 'लोक शिक्षण सप्ताह' मनाने का दृढ़ निश्चय किया। इसका यही अर्थ था कि देश के कोने-कोने में इलाहाबाद न्यायालय के फैसले का महत्त्व समझाया जाये और श्रीमती इन्दिरा गांधीजी को त्याग-पत्र देने हेतु जनमत तैयार किया जा सके।

इन दिनों राष्ट्रपति श्री फखरुद्दीन अली अहमद श्रीनगर में थे। जब वे १६ जून को दिल्ली पहुँचे तो विपक्ष के विभिन्न नेता उन्हें मिलने गए ताकि वे देश में उत्पन्न हुई राजनीतिक स्थिति से उन्हें अवगत करवा सकें। उन्होंने राष्ट्रपति से प्रार्थना की कि वे श्रीमती इन्दिरा गांधी को पद से हटने का आदेश दें (भारतीय संविधान के अनुसार जब तक बहुमत वाले दल का समर्थन प्राप्त व्यक्ति चाहे, प्रधानमन्त्री बना रह सकता है) श्री अहमद मौन रहे, क्योंकि वह किसी दल का पक्षपात करने के हक में न थे। उन्होंने संविधान-परम्परा-अनुसार मन्त्रीमंडल के कहने पर ही कार्य करना श्रेष्ठ समझा।

इन सब बातों से श्रीमती इन्दिरा गांधी तिलमिला उठीं। उनके भाषणों में तल्खी और आक्रोश स्पष्ट दिखाई देने लगा। विरोधी दल प्रतिदिन नयी योजनाएँ बनाने लगे। २५ जून को दिल्ली के रामलीला मैदान में लोकनायक जयप्रकाश नारायणजी ने अपने ऐतिहासिक भाषण में एकता और एकजुट हो कर कार्य करने के लिए प्रेरित किया एवं उन्होंने पुलिस और सेना से गैर-कानूनी आदेश न मानने का आग्रह भी किया। इस सभा में विपक्ष के सभी दलों ने मिल-जुलकर योगदान दिया। इस रैली में उन्होंने श्री मोरारजी देसाई की अध्यक्षता में पाँच सदस्यीय 'लोक संघर्ष समिति' के गठन की घोषणा की, जिसे

श्रीमती इन्दिरा गांधीजी को त्यागपत्र देने के लिए वाध्य करने के उद्देश्य से एक राष्ट्रव्यापी आन्दोलन चलाया था।

श्री जयप्रकाश नारायण का त्यागपत्र देने का आग्रह और विपक्ष का राष्ट्रव्यापी आन्दोलन मानो एक वज्रपात हो गया। श्रीमती इन्दिरा गांधी दुविधा में घिर गईं। भारतीय जन जो श्रीमती गांधी को दुर्गा, क्रांतिकारी, नवज्योति एवं प्रतिभा की देवी समान मान थे, वह भी त्याग-पत्र की मांग करने लगे। श्रीमती इन्दिरा गांधी को उनके विशेष सहयोगियों ने परामर्श दिया कि इमरजेन्सी को लगाने का यही सुनहरा अवसर है। फलतः उसी रात्रि के मध्य में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने राष्ट्रपति से आपात्काल स्थिति के घोषणा-पत्र पर हस्ताक्षर करवा लिये। सभी पूर्व योजनानुसार विरोधी दलों के मुख्य नेता जिनमें जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटलबिहारी वाजपेयी, राजनारायण, जार्ज फर्नांडीज, लालकृष्ण अडवानी, मधु दंडवते, कृष्णकांत इत्यादि तथा हजारों की संख्या में अन्य कार्यकर्ता गिरफ्तार कर लिये गये। यहाँ तक कि अपने ही दल के विरोधी विचारधारा वाले व्यक्ति जिनमें चन्द्रशेखर, रामधन इत्यादि को भी पकड़कर बन्दी बना लिया गया। कांग्रेस के अनेक कार्यकर्ताओं पर कड़ी निगरानी रखी गई।

आपात-स्थिति में परिस्थितियों का परिवेश

२५ जून १९७५ को भारत की तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने घोषणा की कि 'स्वतन्त्रता खतरे में है, अपनी पूर्ण शक्ति से उसकी रक्षा करो।' सरकारी प्रवक्ताओं ने अपना तर्क देते हुए कहा कि "विरोधी दलों की निरन्तर अराजकता और अव्यवस्था के पथ पर चलकर तोड़-फोड़ करने की नीति देश के स्थायित्व के लिए घातक है। अतः कोई भी सरकार, उन कृत्यों की अनुमति नहीं दे सकती जिससे देश की सुरक्षा, स्थायित्व और अर्थव्यवस्था को खतरा पैदा हो" उनका यह मत स्पष्ट था कि अविवेकी विरोधी पक्ष से स्वाधीनता को संकट उत्पन्न हो गया था, क्योंकि वे अपने संकुचित स्वार्थों को राष्ट्र से ऊपर मानकर चल रहे थे। विरोधी पक्ष ने लोकतन्त्र द्वारा प्रदत्त सभी कर्तव्यों का त्याग कर दिया था और गैर-कानूनी कार्यवाही, अराजकता तथा गड़बड़ फैलाकर लोकतन्त्र को खतरा पैदा कर रहे थे।

अगली प्रातः प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का राष्ट्र के नाम सन्देश बार-बार प्रसारित किया गया जो इस प्रकार था—

माननीय राष्ट्रपति महोदय ने आपत्काल की घोषणा की है। इसमें आतंकित होने का कोई कारण नहीं है।

मुझे विश्वास है कि आप सभी गहरे और व्यापक षड्यंत्र से अवगत होंगे, जो उस समय से रचा जा रहा है जबसे मैंने भारत के जन-साधारण के लाभ के लिए कुछ प्रगतिशील उपाय करने शुरू किये। प्रजातन्त्र के नाम पर प्रजातन्त्र

के काम को ही नकारने की कोशिश की जा रही है। विधिवत रूप से निर्वाचित विधान सभाओं को विघटित करने के उद्देश्य से सदस्यों को त्याग-पत्र देने के लिए बाध्य किया गया है। आन्दोलनों से वातावरण भर गया है, जिनसे हिंसात्मक वारदातें हुई हैं। मेरे मन्त्रिमंडल के साथी श्री० एल० एन० मिश्र की अमानुषिक हत्या से सारे देश को धक्का लगा है। भारत के मुख्य न्यायाधीश पर कातिलाना हमले की भी हम घोर निन्दा करते हैं।

कुछ लोग तो हमारे सशस्त्र सैनिकों तथा पुलिस को विद्रोह करने के लिए उकसाने लगे हैं। हमारे सैनिक और पुलिस अनुशासित और महान् देशभक्त हैं और वे उनकी झांसेबाजी में नहीं आयेंगे, फिर भी इसकी गम्भीरता को नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता। विघटन-तत्त्व पूर्ण रूप से सक्रिय है और साम्प्रदायिक भावना उभारी जा रही है, जिससे हमारी एकता को खतरा है।

मुझ पर सभी प्रकार के झूठे आरोप लगाए जा रहे हैं। भारतीय जनता मुझे बचपन से जानती है। मेरा सारा जीवन जनता की सेवा में बीता है। यह एक निजी मामला नहीं है। यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि मैं प्रधानमन्त्री रहती हूँ या नहीं, लेकिन प्रधानमन्त्री का पद महत्त्वपूर्ण है और इसे जानबूझ कर बदनाम करने का राजनीतिक प्रयास न तो प्रजातन्त्र के हित में है और न राष्ट्र के।

बहुत दिनों से इन घटनाओं को हम अत्यधिक धैर्य से देखते रहे। अब हमें इनके नए कार्यक्रमों का पता चला है जिनसे सारे देश में सामान्य कार्य में बाधा डालने के उद्देश्य से, कानून और व्यवस्था को चुनौती दी गयी है। क्या कोई भी सरकार, जो सही रूप में सरकार है, देश के स्थायित्व को ऐसे खतरे में पड़ने दे सकती है? कुछ के कार्यों से अधिकांश लोगों के अधिकार खतरे में पड़ गए हैं। कोई भी ऐसी स्थिति, जिससे देश के भीतर निर्णायक रूप से कार्य करने की राष्ट्रीय सरकार की क्षमता कमजोर होती है, वह बाहरी खतरे को निश्चय ही प्रोत्साहन देगी। यह हमारा परम कर्तव्य है कि हम एकता और स्थायित्व की रक्षा करें। राष्ट्र की अखण्डता के लिए कठोर कार्रवाई करना जरूरी है।

आंतरिक स्थायित्व और खतरे से उत्पादन और आर्थिक उन्नति की सम्भावनाओं पर भी असर पड़ता है। पिछले कुछ महीनों में निश्चित कार्रवाई से हमें कीमतों को बढ़ने से रोकने के लिए [illegible] में सफलता मिली [illegible] हम अर्थव्यवस्था को मजबूत करने तथा विभिन्न वर्गों, विशेषकर [illegible]

असुरक्षित वर्गों तथा उन लोगों की, जिनकी आय निर्धारित है, कठिनाइयों को दूर करने के और उपायों पर सक्रिय रूप से विचार कर रहे हैं। मैं शीघ्र ऐसे उपायों की घोषणा करूँगी।

मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि इस नये आपत्काल की घोषणा से कानूनप्रिय नागरिकों के अधिकारों पर किसी प्रकार से असर नहीं पड़ेगा। मुझे विश्वास है कि आन्तरिक स्थिति में तेजी से सुधार होगा, जिससे हम शीघ्र से शीघ्र इस घोषणा को समाप्त कर सकेंगे।

भारत के सभी हिस्सों तथा जनता के सभी वर्गों की सद्भावना-सन्देशों के लिए मैं अत्यन्त आभारी हूँ। मैं आपसे आने वाले दिनों में आप के सतत् सहयोग और विश्वास की अपील करती हूँ।

जय हिन्द।

आपात्कालीन स्थिति के घोषित होने के उपरान्त विपक्ष की गतिविधियों में ठहराव आ गया। प्रशासन में तेजी आने से सामान्य नागरिक को राहत-सी अनुभव होने लगी। सरकारी प्रवक्ताओं ने इसे 'लोकतंत्र का बचाव' एवं 'अनुशासित लोकशाही की स्थिरता की खोज' का नाम दिया। यहाँ तक कि आदरणीय सन्त विनोबा भावेजी ने इसे 'अनुशासन पर्व' कहकर पुकारा।

इमरजेंसी के अन्तर्गत सारे देश का वातावरण परिवर्तित हो गया। सरकार द्वारा नए-नए नारे दिये गये—

'हम सुनहरे कल की ओर बढ़ रहे हैं।'
'पक्का इरादा
दूर दृष्टि
कड़ी मेहनत
अनुशासन'
'अच्छा बर्ताव कीजिए
जनता का दिल जीतिए'
'काम को जल्दी निबटाइए
देश को आगे ले जाइए'

कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने अपने प्रस्ताव में आपत्काल की घोषणा को जो उन गम्भीर घटनाओं की दृष्टि में अनिवार्य हो गयी थी जो एक जटिल एवं

कठिन आर्थिक स्थिति को पार्श्वभूमि से कुछ समय से देश में घटित हो रही थीं। विश्व-व्यापी मुद्रा-स्फीति की स्थिति, जिससे कच्चे माल और तैयार वस्तुओं के दामों में अधिक वृद्धि हुई, के बाद तेल की कीमतों में बढ़ोत्तरी हुई। इससे अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। विरोधी दलों ने सहयोग की अपेक्षा बाधा डालने का एक प्रणालीबद्ध अभियान आरम्भ कर दिया। छात्रों को आन्दोलन के प्रति उकसाया···उन्होंने असंवैधानिक एवं अप्रजातान्त्रिक ढंगों के साथ हिंसात्मक तरीके से प्रधानमन्त्री को हटाने का देशव्यापी आन्दोलन आयोजित करने का प्रस्ताव किया। सरकारी कर्मचारी, कार्य न करें, सेना और पुलिस क्रान्ति करे - साम्प्रदायिक घृणा को प्रोत्साहित करने और तनाव पैदा करने के लिए यथासम्भव कार्य किया। इस भयंकर चुनौती का सामना करने की दृष्टि से ऊपर कहे गए विध्वंसकारी प्रयासों के सम्बन्ध में समय से पूर्व कदम उठाते हुए माननीय राष्ट्रपति महोदय को संविधान के आपत्कालीन प्रावधानों की घोषणा करनी पड़ी। समिति ने लोगों को सतर्क बनाने और सरकार को इन बुराइयों का दृढ़तापूर्वक सामना करने के लिए सहयोग व समर्थन देने के लिए भी कहा ताकि भारत प्रजातान्त्रिक एवं समाजवादी परिवर्तन की प्रक्रिया सरल और सुरक्षित बना सके।

१ जुलाई ७५ को राष्ट्र के नाम प्रसारित संदेश में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने जनता के सम्मुख 'बीस सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम' के अन्तर्गत १९७१ के लोकसभा चुनाव 'गरीबी हटाओ' नारे की महत्ता को क्रियान्वित करने के प्रति स्पष्ट दूर-दृष्टि, कड़ा परिश्रम, दृढ़ इच्छा और कठोरतम अनुशासन की बात कही। इस कार्यक्रम द्वारा इन्दिराजी विपक्ष के आन्दोलनों का एक सकारात्मक उत्तर देना चाहती थीं। नये बीस सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम इस प्रकार थे—

१. आवश्यक वस्तुओं की कीमतों को कम करने का प्रयत्न किया जाएगा। उत्पादन में वृद्धि की जायेगी, अनाज की वसूली और वितरण की व्यवस्था में सुधार किया जायेगा। सरकारी विभागों में फिजूलखर्ची को घटाया जायेगा।
२. कृषि योग्य भूमि की सीमा निर्धारित के लिए कानूनों को लागू किया जायेगा। सीमा से अधिक भूमि को भूमिहीन मजदूरों में बाँटा जायेगा और भूमि का ठीक रिकार्ड रखने की व्यवस्था की जायगी।

३. भूमिहीनों और गरीब जनता को आवास-निर्माण के लिए भूमि प्रदान की जायेगी।

४. ठेका मजदूर प्रथा समाप्त की जायेगी। बेगार को अवैध घोषित किया जायेगा।

५. ग्रामीण जनता का ऋण माफ कर दिया जायेगा अथवा जिस ग्रामीण जनता को महाजनों का ऋण देना है, उसे वे वसूल नहीं कर सकेंगे।

६. खेती-मजदूरी कर जीवनयापन करने वाले मजदूरों को न्यूनतम वेतन प्रदान करने की व्यवस्था की जायेगी।

७. पचास लाख हैक्टर भूमि पर सिंचाई का प्रबन्ध और भूमिगत जल का उपयोग किया जायेगा।

८. विद्युत के उत्पादन में वृद्धि की जायेगी।

९. हाथकरघा उद्योग के विकास के लिए नयी योजना। कच्चे धागे की सहूलियत। मोटे कपड़े की किस्म में सुधार एवं इसके वितरण की ठीक-ठीक व्यवस्था की जायेगी।

१०. जनता मे कपड़े की किस्म और आपूर्ति में सुधार।

११. शहरी भूमि और शहरी काम मे आने योग्य भूमि का समाजीकरण। खाली भूमि तथा नये मकानों के क्षेत्रफल की सीमा निर्धारित की जायेगी।

१२. जो लोग शहरी सम्पत्ति की कीमत कम दिखाते है और करों की चोरी करते है, उनकी जांच हेतु विशेष दस्ते नियुक्त किए जायेंगे। आर्थिक अपराधियों को कठोर एवं कड़ी सजाएं दी जायेंगी।

१३. तस्करों की सम्पत्ति जब्त करने के लिए कानून बनाया जायेगा।

१४. पूंजी नियोजन की व्यवस्था को आसान किया जायेगा। जो लोग आयात लायसेंस का दुरुपयोग करेंगे, उन्हें कड़ा दण्ड दिया जायेगा।

१५. उद्योग में श्रमिकों को भागीदार बनाने के लिए नयी योजनाएँ और कानून बनाए जायेंगे।

१६. सड़क परिवहन के लिए राष्ट्रीय परमिट योजना लागू की जायेगी।

१७. मध्य वर्ग को आयकर में छूट दी जायेगी। यह छूट ६ हजार की आमदनी वालों को प्राप्त थी। अर्थात् आयकर की छूट अब ८ हजार रुपये वार्षिक आमदनी वालों को भी मिलेगी।
१८. विद्यार्थियों को छात्रावासों में सभी आवश्यक वस्तुएँ नियन्त्रित (कन्ट्रोल) मूल्य पर सप्लाई करने की व्यवस्था की जायेगी।
१९. छात्रों को पाठ्य-पुस्तकें तथा नोट बुक नियन्त्रित कीमत पर मिलेगी।
२०. लोगों को, विशेषकर कमजोर वर्गों को, रोजगार तथा प्रशिक्षण देने के लिए अप्रेंटिसशिप की नई योजनाएँ बनायी जायेंगी।

यह कार्यक्रम प्रधानमन्त्री के विकास योजना के प्रमुख उद्देश्यों की ओर एक सुनिश्चित कदम था। धीरे-धीरे इनका समर्थन देशव्यापी होने लगा। इसी बीच श्रीमती इन्दिरा गांधीजी के सुपुत्र संजय गांधी ने युवा-नेता के रूप में भारतीय राजनीति में प्रवेश किया एवं रातोंरात लोकप्रियता की चरम सीमा पर पहुँच गया। उन्होंने बीस सूत्रों के साथ अपने पाँच सूत्र भी जोड़ दिये, जिनका प्रयोग और साकार करना उतना ही अनिवार्य था, जितना बीस सूत्री कार्यक्रम! (परिवार नियोजन, वृक्षारोपण, साक्षरता, दहेज उन्मूलन और जाति प्रथा उन्मूलन)।

बीस सूत्रीय कार्यक्रम का अगर अर्थशास्त्र की पृष्ठभूमि के आधार पर मूल्यांकन किया जाये तो यह बात निःसन्देह कहनी पड़ेगी कि ये सभी तत्व समाज को प्रगति की ओर ले जाते हैं एवं देश समृद्ध, सम्पन्न और कल्याणकारी बन सकता है। इमरजेंसी के पहले दिनों में अनुशासन, प्रशासन में सुधार दिखाई देने लगा। अफसर सक्रिय हो गये, कर्मचारी समय से कार्य करने लगे। गाड़ियाँ ठीक समय पर चलने लगी। महँगाई में ठहराव आ गया, आवश्यक चीजें निश्चित कीमतों पर मिलने लगी। मध्यवर्गीय व्यक्ति का जीवन सामान्य होने लगा। काश! यह ऐसा ही रहता! परन्तु थोड़े ही समय में यह कार्यक्रम केवल एक कोरी कागजी योजना, एक नारा और ढोंग बनकर रह गया। धीरे-धीरे इसकी समस्त उपलब्धियाँ धूमिल होने लगीं। दरअसल आपातस्थिति देश को न टूटने देने और 'लोकतन्त्र को भ्रष्ट' होने से बचाने की भावना से लगाई गई थी, परन्तु अफसरशाही और कांग्रेस के चमचों ने सारे हालात बिगाड़ दिए, आखिर आहिस्ते-आहिस्ते यह सारी पार्टी को ले डूबी।

अराष्ट्रीय संगठनों पर प्रतिबन्ध

४ जुलाई को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, जमायते इस्लामी-ए-हिंद, आनन्द मार्ग सहित अन्य ३२ संगठनों को अराष्ट्रीय आरोप लगाते हुए प्रतिबन्ध लगा दिया गया, जिनके कुछ नक्सलवादी वर्ग को छोड़कर मुख्यतः कई सहायक संस्थाएँ या मोर्चे थे। सरकार का मत था कि ये सभी साम्प्रदायिक तनाव बढ़ाने, साम्प्रदायिक हत्या, व्यक्तिगत हत्या, राजनीतिक हत्या के मार्ग पर चलकर सारे देश में विध्वंसकारी गतिविधियों में संलग्न थीं।

मीसा और डी० आई० आर०

इसी साल भारत सरकार ने मीसा (भारत रक्षा अधिनियम) और डी० आई० आर० जैसे कानून बनाये जिनके अन्तर्गत अनेक निरपराध एवं निर्दोष व्यक्तियों को पकड़कर जेलों में भर दिया गया। इन नेताओं तथा कार्यकर्त्ताओं की सूचना तक, उनके घर वालों को नहीं दी गई। यहाँ तक कि वे किन-किन जेलों में भेजे गये, इसका अनुमान लगाना दुष्कर हो गया।

प्रेस सेंसरशिप

प्रेस पर सेंसरशिप लगाकर स्वतन्त्र अभिव्यक्ति करने की याचना का गला घोंट दिया। सरकार के विरुद्ध समाचार देने वाले समाचार-पत्र बन्द कर दिए गए। देश में आतंक का वातावरण छा गया, लेकिन बहुत आश्चर्य की बात है कि भारत की इतनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति वाले देश के बुद्धिजीवी-वर्ग ने भी इसका स्वागत किया। पत्रकार-जगत् इस अग्नि-परीक्षा-काल में रेंगने लगा। यहाँ तक कि वे कुछ भौतिक लाभ के लिए उनके आगे-पीछे भाग-दौड़ करने लगे। प्रश्न तो यह बन गया कि कौन अधिक खुशामद करके आगे बढ़ सकता है। इस बात का यह प्रभाव हुआ कि जनता के बढ़ रहे रोष की सूचनाएं 'इन्दिरा सरकार' तक न पहुँच पातीं, बल्कि जुल्म और गलतियों की दास्तां चिनगारी की तरह अन्दर-अन्दर सुलगने लगी। कल्याणकारी एवं प्रगतिशील राज्य की अपेक्षा मनमानी, धक्केशाही और दमन का आतंक आरम्भ हो गया।

सत्ता-सम्पत्ति पर एकाधिकार

आपातकाल स्थिति के आरम्भ में इन्दिराजी ने आर्थिक सुधारों और उनके

गम्भीर कार्यान्वयन से देश में व्याप्त अराजकता व अन्याय का सफाया करके नयी समाज-व्यवस्था कायम करने का सकल्प लेते हुए बीस या पच्चीस सूत्री कार्यक्रम आरम्भ किये थे लेकिन चंद लोगों की मनमानी एवं एकाधिकार की इच्छा ने 'गरीबी हटाओ' के झूठे नारों की अपेक्षा 'गरीब' हटाने का सुअवसर व्यापारियों, उद्योगपतियों और अफसरशाही संगठन को मिल गया। राजनीतिक और औद्योगिक सत्ता एक विशेष घराने का एकाधिकार बन कर रह गई। दूसरी ओर आम जनता महँगाई की चक्की में पिसने लगी। चारों ओर भय का वातावरण छा गया। लोग भय के कारण सच्ची बात मुँह से न निकाल सके और उपयुक्त समय की प्रतीक्षा में दिन काटने लगे।

संविधान संशोधन

आपात्काल की घोषणा के शीघ्र पश्चात् अगस्त १९७५ में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपने सहयोगी कानून मन्त्री श्री हरिराम रामचन्द्र गोखले ने संसद में स्पष्टीकरण किया कि वह संविधान पर पुनर्दृष्टि चाहते हैं। इस विचार के आधीन निम्नलिखित संविधान संशोधन किए गए—

१. ३७वें संशोधन द्वारा अध्यादेश जारी करने के राष्ट्रपति के अधिकार, किसी भी राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने, आपातकाल की घोषणा करने के मामलों में न्यायालय के किसी भी विषय में विचार करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। विशेषकर आपात्काल के समय में नागरिकों के मूल अधिकारों को भी सीमित करने का संशोधन कर दिया गया।

२. ३९वें संशोधन द्वारा राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमन्त्री एवं लोकसभा के अध्यक्ष के चुनावों की वैधता को दी गई चुनौती पर विचार करने के लिए एक विशेष पद्धति का निर्माण किया गया। (यहाँ पर इस बात का स्मरण रखना चाहिए कि यह केवल प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधीजी के इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय को समाप्त करने हेतु ही था) इसके साथ ही मीसा, चुनाव-कानून तथा कई अन्य विषयों में संशोधन किया गया। अब संविधान की ९वीं सूची में मूल अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर चुनौती देने का अधिकार समाप्त हो गया।

३. ४०वें संशोधन द्वारा ६४ अधिनियमों को ९वीं सूची में शामिल किया

गया, जिसके अन्तर्गत आपत्तिजनक सामग्री प्रकाशित नहीं हो सकेगी।

४. ४१वें संशोधन द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग सदस्य की निवृत्ति आयु ६० से बढ़ाकर ६२ कर दी गई।

५. ४२वें संशोधन के अन्तर्गत केन्द्र सरकार को कहीं भी सशस्त्र सेना तैनात करने का अधिकार दे दिया गया। (हमारे संविधान के मूल ढांचे में संसदीय प्रणाली को स्वीकारा गया है, जिसका संवैधानिक प्रमुख राष्ट्रपति है। इस संविधान में फेडरल व्यवस्था का भी स्थान है, जबकि दूसरी ओर केन्द्र की प्रधानता राज्यों पर होते हुए भी उसे (केन्द्र) कुछ बुनियादी सिद्धान्तों के पालन करने का निर्देश है ताकि नागरिकों के 'मूल अधिकारों' की सुरक्षा निरन्तर बनी रहे) वैसे संविधान की ३५५वीं धारा के अनुसार 'आन्तरिक अव्यवस्था या गड़बड़ी' के समय पर सेना को बुलाया जा सकता है, परन्तु इस संशोधन द्वारा कानून और व्यवस्था की किसी भी गम्भीर स्थिति में सशस्त्र सेनाओं को तैनात करने के अधिकार था। दूसरे शब्दों में इस संशोधन का यह अर्थ निकलता है कि केन्द्र के अधिकारों में बढ़ावा हो गया और न्यायपालिका का एकात्मक स्वरूप बिगड़ गया।

इस प्रकार श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपनी गद्दी के बचाव के लिए अनेकों कानून पास करवा लिए। यहाँ तक कि राजनीति के निर्देशक सिद्धांत, जिन्हें संविधान निर्माताओं ने मार्गदर्शक के रूप में रखा था, उन्हें बिल्कुल उलट दिया गया। अब किसी को भी 'राष्ट्र-विरोधी' का नाम देकर प्रतिबन्ध लगाने का कानून बनाया जा सकता है, क्योंकि इस कानून को कहीं भी किसी भी, आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती। मूल अधिकार (धारा १४) भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, शान्तिमय ढंग से एकत्र होने, संघ बनाने, गैर कानूनी ढंग से संपत्ति छीनने (धारा १४, १६, २१) के विरुद्ध अधिकार के उल्लंघन हेतु किसी भी न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया जा सकता।

आपात्कालीन स्थिति में कांग्रेस के कुछ नेताओं ने नादिरशाही का दौर चला दिया और राजनीति के क्षितिज पर नये चमके युवा-नेता संजय गांधी को अपनी महत्त्वाकांक्षाओं का मोहरा बना लिया। श्रीमती गांधीजी ने उसे अपना विश्वासपात्र बना लिया। साधारण नारी की तरह श्रीमती इन्दिरा गांधीजी भी अपने पुत्र श्री संजय गांधी को गद्दी सौंपने की लालसा में राज्य के कार्यों

में उससे विचार-परामर्श करने लगीं। एक ओर कांग्रेस निर्धन जनता का पेट भरने का दम भरती रही, दूसरी ओर जनता पर थोपा हुआ नेता अपनी अनजान नीति से अपने समीप केवल चापलूस और खुशामदी लोगों को एकत्र करने में व्यस्त रहा। युवा कांग्रेस संगठन ने पुराने और विज्ञ कांग्रेसजनों की महत्ता कम कर दी। चतुर और शक्ति के इच्छुक नेता—जिनमें मुख्यमन्त्री, मन्त्रियों, प्रदेश कांग्रेस अध्यक्षों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण सत्ता-पद अधिकारियों का अपने राज्यों की अपेक्षा—व्यक्तिगत रूप में श्री संजय गांधीजी के दरबार में नियमित रूप से हाजिर रहना और उन्हें प्रसन्न रखना ही मुख्य उद्देश्य रह गया। खुशामद करते हुए यह नेता उन्हें 'राष्ट्रनेता', 'नव-भारत निर्माण नेता' और 'श्रद्धेय' कहते न थकते थे। प्रत्येक राज्य में उनके सम्मान के लिए लाखों रुपया खर्च किया गया। लोगों को जबरदस्ती खींचकर उन्हें देखने के लिए ले आया जाता। इसके पीछे एक ही रहस्य छिपा हुआ था कि उन्हें अधिक से अधिक गौरव दिया जाये।

इमरजेंसी के थोड़े ही काल में श्री संजय गांधी अपने वंश-विशेषकर श्रीमती इन्दिरा गांधी के अद्वितीय व्यक्तित्व का कवच पहनकर देश का महत्त्वपूर्ण अंग बन गया। संजय गांधी का सहारा लेकर अनेक महत्त्वाकांक्षी नेताओं ने भोलीभाली जनता पर अत्याचार करने आरम्भ कर दिए। धीमे-धीमे वे सत्ता पर इतने हावी हो गए जो जन-अधिकारों की रक्षा और विकास-कार्यों की अपेक्षा, दमन तथा ज्यादतियों का काल बन कर रह गया, जिसने न केवल नेहरू-परिवार की मर्यादा बल्कि कांग्रेस के तीस साल के संघर्ष और स्वाधीनता-संग्राम के इतिहास को मिट्टी में दफना दिया।

आपात्-स्थिति में कांग्रेस-जनों ने लोक-सेवा से हटकर मनमानी एवं एकाधिकारी बनने की चेष्टा की। संजयजी के नसबन्दी और विध्वंसक-कार्यों को जोर-जबर्दस्ती और जुल्म से आरम्भ किया गया। लोगों को नसबन्दी करवाने को विवश किया गया। जनता ने इस अभियान को पूरी तरह ठुकरा दिया, लेकिन जहां-जहां इसका विरोध हुआ, वहां उन्हें प्रशासन की यन्त्रणा सहन करनी पड़ी। सभी राज्य सरकारों के लिए नसबन्दी का अनिवार्य कोटा निश्चित किया गया। सरकारी कर्मचारियों एवं अध्यापिकाओं को नसबन्दी करवाने के लिए मजबूर किया गया, ऐसा न करने की स्थिति में नौकरी से पृथक करने की धमकियां दी जातीं, मासिक वेतन रोक दिया जाता। कर्मचारियों को कहा जाता

कि अगर वे निश्चित संख्या में केस नहीं लायेंगे, उन्हें वेतन नहीं
देश के अधिकांश राज्यों में परिवार-नियोजन-अभियान को शिखर प
अनजान और भोली-भाली जनता के जीवन से खिलवाड़ किया जाने लग
तक कि इस अभियान के अधीन कई कुंवारे, बूढ़े और लाचार लोगों को
नसबन्दी की सूली पर चढ़ाया गया। सोये हुए लोगों को उठाकर, गांवों
कर, ट्रेन और बसों से उतार कर पुलिस के सहयोग से जबरदस्ती, ब
से ऑपरेशन किये जाते। यह अभियान 'स्टैर्लाइज एट साइट' (देखते
बन्दी कर दो) प्रोग्राम के अधीन चरम-सीमा पर पहुंच गया। लो
रहने लगे। यह अत्याचार देखते हुए गांव-गांव, गली-गली, जनता
'इन्दिरा सरकार' के विरुद्ध प्रतिशोध की भावना भड़क गई, लेकिन
पर प्रेस-सेंसरशिप के ताले लगे होने के कारण आवाज न निकल स
अन्दर-ही-अन्दर दम घुटता रहा।

एक तरफ तो नसबन्दी अभियान जोरों पर था, दूसरी ओर का
और लोकतन्त्र के अधीन सैंकड़ों लोग प्रतिदिन गिरफ्तार किये
किसी को दोष भी न बतलाया जाता। प्रगति और सफाई के ना
कब्जा किया गया। कालोनियों पर बुलडोजर चलने लगे। छोटी
बस्तियों के सुधार के नाम पर अनेकों झुग्गी-झोंपड़ियों को मिटा
जिसमें हजारों की संख्या में लोग सिर ढंकने से मोहताज हो गये
ज़ुबान तो पहले ही बन्द कर दी गई थी। आकाशवाणी, दूरदर्शन
पत्र, जिन्हें हम स्वतन्त्र विचार व्यक्त करने का एकमात्र साधन
सरकारी नीतियों तथा बेबुनियाद बातों को ही प्रदर्शन करने का
गया। इसके द्वारा विपक्ष को सदैव बदनाम ही किया जाता। छो
बढ़ा-चढ़ाकर साधारण जनता के सम्मुख पेश किया जाता। सर
न ने में गरीब जनता की कोई सुरक्षा न थी।

सरकारी तन्त्र ने 'मीसा' और 'डी० आई० आर०' का खुल
में प्रयोग किया। विपक्ष के मुख्य नेता और कार्यकर्ताओं को
के जेलों में ठूंस दिया गया। उन्हें गन्दा खाना दिया गया। उन
चार किये गये। मजदूरों के अधिकार छीन लिए गये। नागरि
तानाशाही का बोलबाला छा गया। बोनस और अनिवार्य ब

प्रतिबन्ध लगा दिया गया। न्यायपालिका के अधिकार सीमित कर दिए गये। बड़े-बड़े अफसरों ने मीसा का सहारा लेकर व्यक्तिगत प्रतिशोध निकाला। फिल्मी सितारों को कांग्रेसी समारोहों में शामिल होने के लिए विवश किया गया। युवक-कांग्रेस की एक सभा में अचानक प्रसिद्ध अभिनेता और पार्श्व-गायक किशोरकुमार नहीं पहुँचे, तो फलस्वरूप उनके गाने रेडियो और टेलीविज़न पर बन्द कर दिए गये। सेंसरशिप की कैंची से अनेक उच्चकोटि की फिल्मों का गला घोंट दिया गया। प्रसिद्ध अभिनेत्री हेमामालिनी को एक सरकारी पुरस्कार-वितरण समारोह पर राजनर्तकी के समान नाचने के लिए विवश किया गया। अनेक विज्ञ, उद्योगपति, अध्यापक, प्राध्यापक, अफसर, वकील एवं कलाकारों को कांग्रेस को सहयोग न देने पर धमकियां दी गईं और उन्हें राष्ट्र-विरोधी केसों में लपेट लिया गया। इसके विपरीत अपने चहेते, मित्रों और सम्बन्धियों को कोटे, परमिट एवं अन्य सहयोग दिया गया। इस काल में 'जी हजूरी' के फार्मूले से कार्य किया जाता रहा। इस प्रकार इमरजेंसी का यह उज्ज्वल अध्याय तानाशाही की निर्लज्जता का काला अध्याय बनकर रह गया, जिसमें शान्तिप्रिय जनता चुपचाप जुल्म एवं अत्याचार सहन करती गई, लेकिन उनके अन्दर इस सरकार के प्रति क्रोध और घृणा निरन्तर ज्वालामुखी के समान भड़कने लगी।

कि अगर वे निश्चित संख्या में केस नहीं लायेंगे, उन्हें वेतन नहीं मिलेगा। देश के अधिकांश राज्यों में परिवार-नियोजन-अभियान को शिखर पर लाकर अनजान और भोली-भाली जनता के जीवन से खिलवाड़ किया जाने लगा। यहां तक कि इस अभियान के अधीन कई कुंवारे, वृद्ध और लाचार लोगों को घेरकर नसबन्दी की सूली पर चढ़ाया गया। सोये हुए लोगों को उठाकर, गांवों को घेर कर, ट्रेन और बसों से उतार कर पुलिस के सहयोग से जबरदस्ती, बड़ी बेदर्दी से ऑपरेशन किये जाते। यह अभियान 'स्टैरलाइज एट साइट' (देखते ही नसबन्दी कर दो) प्रोग्राम के अधीन चरम-सीमा पर पहुंच गया। लोग भयभीत रहने लगे। यह अत्याचार देखते हुए गांव-गांव, गली-गली, जनता के अन्दर 'इन्दिरा सरकार' के विरुद्ध प्रतिशोध की भावना भड़क गई, लेकिन उनके मुंह पर प्रेस-सेंसरशिप के ताले लगे होने के कारण आवाज न निकल सकी, बल्कि अन्दर-ही-अन्दर दम घुटता रहा।

एक तरफ तो नसबन्दी अभियान जोरों पर था, दूसरी ओर कानून-व्यवस्था और लोकतन्त्र के अधीन सैकड़ों लोग प्रतिदिन गिरफ्तार किये जाते रहे। किसी को दोष भी न बतलाया जाता। प्रगति और सफाई के नाम पर अवैध कब्जा किया गया। कालोनियों पर बुलडोजर चलने लगे। छोटी और गंदी बस्तियों के सुधार के नाम पर अनेकों झुग्गी-झोंपड़ियों को मिटा दिया गया, जिसमें हजारों की संख्या में लोग सिर ढंकने से मोहताज हो गये। लोगों की जुबान तो पहले ही बन्द कर दी गई थी। आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं समाचार-पत्र, जिन्हें हम स्वतन्त्र विचार व्यक्त करने का एकमात्र साधन कहते हैं, वह सरकारी नीतियों तथा बेबुनियाद बातों को ही प्रदर्शन करने का ढिंढोरची बन गया। इसके द्वारा विपक्ष को सदैव बदनाम ही किया जाता। छोटी-सी बात को बढ़ा-चढ़ाकर साधारण जनता के सम्मुख पेश किया जाता। सत्ता के अन्धाधुन्ध नशे में गरीब जनता की कोई सुरक्षा न थी।

सरकारी तन्त्र ने 'मीसा' और 'डी० आई० आर०' का खुलकर मनचाहे ढंग में प्रयोग किया। विपक्ष के मुख्य नेता और कार्यकर्ताओं को बिना किसी दोष के जेलों में ठूंस दिया गया। उन्हें गन्दा खाना दिया गया। उन पर अनेक अत्याचार किये गये। मजदूरों के अधिकार छीन लिए गये। नागरिक स्वतन्त्रता पर तानाशाही का बोलबाला छा गया। बोनस और अनिवार्य बचत योजना पर

प्रतिबन्ध लगा दिया गया। न्यायपालिका के अधिकार सीमित कर दिए गये। बड़े-बड़े अफसरों ने मीसा का सहारा लेकर व्यक्तिगत प्रतिशोध निकाला। फिल्मी सितारों को कांग्रेसी समारोहों में शामिल होने के लिए विवश किया गया। युवक-कांग्रेस की एक सभा में अचानक प्रसिद्ध अभिनेता और पार्श्व-गायक किशोरकुमार नहीं पहुँचे, तो फलस्वरूप उनके गाने रेडियो और टेलीविजन पर बन्द कर दिए गये। सेंसरशिप की कैंची से अनेक उच्चकोटि की फिल्मों का गला घोंट दिया गया। प्रसिद्ध अभिनेत्री हेमामालिनी को एक सरकारी पुरस्कार-वितरण समारोह पर राजनर्तकी के समान नाचने के लिए विवश किया गया। अनेक विज्ञ, उद्योगपति, अध्यापक, प्राध्यापक, अफसर, वकील एवं कलाकारों को कांग्रेस को सहयोग न देने पर धमकियाँ दी गईं और उन्हें राष्ट्र-विरोधी केसों में लपेट लिया गया। इसके विपरीत अपने चहेते, मित्रों और सम्बन्धियों को कोटे, परमिट एवं अन्य सहयोग दिया गया। इस काल में 'जी हजूरी' के फार्मूले से कार्य किया जाता रहा। इस प्रकार इमरजेंसी का यह उज्ज्वल अध्याय तानाशाही की निर्लज्जता का काला अध्याय बनकर रह गया, जिसमें शान्तिप्रिय जनता चुपचाप जुल्म एवं अत्याचार सहन करती गई, लेकिन उनके अन्दर इस सरकार के प्रति क्रोध और घृणा निरन्तर ज्वालामुखी के समान भड़कने लगी।

जनतंत्र की विजय : लोकसभा चुनाव—१९७७



आपातकाल के १९ महीनों में कांग्रेस-जन ऐसा अनुभव करने लग गए थे कि २५ सूत्रीय कार्यक्रम ने जनमानस के सिंहासन पर पूर्ण नियन्त्रण कर लिया है। अब लोगों का मनोबल देश की एकता और लोकतन्त्र के अनुकूल है। उनका यह मत भी था कि इस काल में कांग्रेस जन-जन के अन्दर घर कर गई है। यहाँ पर एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि प्रेस की सेंसरशिप होने के कारण 'इन्दिरा सरकार' लोगों की भावनाओं को समझने में असमर्थ रही। लोगों की जुबानें भले ही बन्द थीं, लेकिन उनकी अन्तर-आत्मा ने इस झूठे दावे की प्रामाणिकता को स्वीकार नहीं किया था। इस बात का तनिक भी आभास न हो सका कि कांग्रेस नेता जनता की बुनियादी कठिनाइयों से हटकर अपना पेट भरने में व्यस्त हैं। यह कहना भी अशोभनीय नहीं होगा कि देश की राजनीति मुट्ठी-भर नेताओं के हाथों में केन्द्रित हो चुकी थी। लोकतन्त्र का मुखौटा पहनकर, इन नेताओं ने डंडे से जनता को हाँकना आरम्भ कर दिया।

भारतीय प्रेस सेंसरशिप ने स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मानो गला ही घोंट दिया। समाचार-पत्रों में सरकारी झूठे दावों को सच प्रमाणित करने के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य न रह गया था। इसी बीच अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर पड़ोसी पाकिस्तान-जैसे निरंकुश देश में चुनाव की घोषणा हो गई। इसका प्रभाव यह हुआ कि विश्व के कुछ समाचार-पत्रों ने 'क्या इन्दिरा तानाशाह बन रही हैं ?' शीर्षक के अधीन एक गम्भीर प्रश्न-चिह्न उपस्थित कर दिया।

इससे इन्दिराजी स्वयं तिलमिला उठीं। उनके समर्थकों ने आग्रह किया कि यही अवसर है कि वह फिर से लोकमत का समर्थन कायम करें एवं विश्व की खुली चुनौती का मुकाबला करें। देश के अन्दर भी यही प्रश्न ज्वलंत हो रहा था। आम जनता का मत था कि श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपनी तानाशाही बनाए रखने के लिए पुलिस अधिकारियों तथा अन्य सरकारी अफसरों को इतने अधिक अधिकार दे दिये कि उनका प्रयोग जनहित और प्रगति के प्रति असम्भव हो गया था। इसका एक अन्य कारण सम्भवतः यह था कि यह तानाशाही किसी लोकमत के समर्थन पर आधारित न थी।

यहाँ पर यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बंगला देश के प्रधान-मन्त्री शेख मुजीबुर्रहमान ने लोकतन्त्र का गला घोंटकर विपक्षी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया एवं अपने 'चहेते' सहयोगियों के साथ मिलकर एकदलीय प्रणाली स्थापित करने के प्रयास में उसे मुँह की खानी पड़ी (यहाँ तक कि वह स्वयं भी बलि चढ़ गये) उसी प्रकार श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी उन कमजोरियों को ठीक करते हुए (जो बंगला देश में घटी थीं) एकदलीय प्रणाली-हेतु परि-स्थितियाँ बनाकर स्वयं, पर अपने विशेष प्रतिनिधि को मुखिया बनने के बरबस प्रयास में चुनाव करवाने के ढंग को उपयुक्त कदम समझा। वैसे आपात्कालीन समय में विपक्ष को पीछे धकेल दिया गया था, लेकिन अपने दल के विरोधी पक्ष का सफाया करना एवं संसद में अपने गुट का एकाधिकार बनाये रखने के लिए चुनाव का करवाना अनिवार्य हो गया था।

इंदिराजी के मन में यह आकांक्षा एकाएक उत्पन्न हो गई कि विश्व-जनमत को अपने पक्ष में करने और स्वयं को तानाशाही की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक नेता प्रमाणित करने के लिए कोई-न-कोई योजना बनानी चाहिए। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए 'गोहाटी' में युवा-कांग्रेस का सम्मेलन बुलाया गया। दरअसल यह सम्मेलन केवल संजय गांधी एवं उसके व्यक्तिगत रूप में वफादार सदस्यों का ही प्रदर्शन था ताकि इस बात का अनुमान लगाया जा सके कि संजय गांधी को अपना उत्तराधिकारी बनाना कहाँ तक संगत है? इसमें कांग्रेस के कर्मठ, ईमानदार और वरिष्ठ व्यक्तियों को मौन धारण करना पड़ा, क्योंकि उन्हें भली-भाँति आभास हो गया था कि अगर वे मुँह खोलेंगे या गलत कामों का खंडन करेंगे तो उन्हें भी 'मीसा' तथा 'डी० आई० आर०' के अधीन बन्द कर दिया

जनतंत्र की विजय : लोकसभा चुनाव—१९७७

□

आपात्काल के १९ महीनों में कांग्रेस-जन ऐसा अनुभव करने लग गए थे कि २५ सूत्रीय कार्यक्रम ने जनमानस के सिंहासन पर पूर्ण नियन्त्रण कर लिया है। अब लोगों का मनोबल देश की एकता और लोकतन्त्र के अनुकूल है। उनका यह मत भी था कि इस काल में कांग्रेस जन-जन के अन्दर घर कर गई है। यहाँ पर एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि प्रेस की सेंसरशिप होने के कारण 'इन्दिरा सरकार' लोगों की भावनाओं को समझने में असमर्थ रही। लोगों की जुबानें भले ही बन्द थीं, लेकिन उनकी अन्तर-आत्मा ने इस झूठे दावे की प्रामाणिकता को स्वीकार नहीं किया था। इस बात का तनिक भी आभास न हो सका कि कांग्रेस नेता जनता की बुनियादी कठिनाइयों से हटकर अपना पेट भरने में व्यस्त है। यह कहना भी अशोभनीय नहीं होगा कि देश की राजनीति मुट्ठी-भर नेताओं के हाथों में केन्द्रित हो चुकी थी। लोकतन्त्र का मुखौटा पहनकर, इन नेताओं ने डंडे से जनता को हाँकना आरम्भ कर दिया।

भारतीय प्रेस सेंसरशिप ने स्वतंत्र अभिव्यक्ति का मानो गला ही घोंट दिया। समाचार-पत्रों में सरकारी झूठे दावों को सच प्रमाणित करने के अतिरिक्त अन्य कोई कार्य न रह गया था। इसी बीच अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर पड़ोसी पाकिस्तान-जैसे निरंकुश देश में चुनाव की घोषणा हो गई। इसका प्रभाव यह हुआ कि विश्व के कुछ समाचार-पत्रों ने 'क्या इन्दिरा तानाशाह बन रही हैं ?' शीर्षक के अधीन एक गम्भीर प्रश्न-चिह्न उपस्थित कर दिया।

इससे इन्दिराजी स्वयं तिलमिला उठीं। उनके समर्थकों ने आग्रह किया कि यही अवसर है कि वह फिर से लोकमत का समर्थन कायम करें एवं विश्व की खुली चुनौती का मुकाबला करें। देश के अन्दर भी यही प्रश्न ज्वलंत हो रहा था। आम जनता का मत था कि श्रीमती इन्दिरा गांधी ने अपनी तानाशाही बनाए रखने के लिए पुलिस अधिकारियों तथा अन्य सरकारी अफसरों को इतने अधिक अधिकार दे दिये कि उनका प्रयोग जनहित और प्रगति के प्रति असम्भव हो गया था। इसका एक अन्य कारण सम्भवतः यह था कि यह तानाशाही किसी लोकमत के समर्थन पर आधारित न थी।

यहाँ पर यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि बंगला देश के प्रधान-मन्त्री शेख मुजीबुर्रहमान ने लोकतन्त्र का गला घोंटकर विपक्षी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया एवं अपने 'चहेते' सहयोगियों के साथ मिलकर एकदलीय प्रणाली स्थापित करने के प्रयास में उसे मुँह की खानी पड़ी (यहाँ तक कि वह स्वयं भी बलि चढ गये) उसी प्रकार श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी उन कमजोरियों को ठीक करते हुए (जो बंगला देश में घटी थीं) एकदलीय प्रणाली-हेतु परि-स्थितियाँ बनाकर स्वयं, पर अपने विशेष प्रतिनिधि को मुखिया बनने के बरबस प्रयास में चुनाव करवाने के ढंग को उपयुक्त कदम समझा। वैसे आपात्कालीन समय में विपक्ष को पीछे धकेल दिया गया था, लेकिन अपने दल के विरोधी पक्ष का सफाया करना एवं संसद में अपने गुट का एकाधिकार बनाये रखने के लिए चुनाव का करवाना अनिवार्य हो गया था।

इंदिराजी के मन में यह आकांक्षा एकाएक उत्पन्न हो गई कि विश्व-जनमत को अपने पक्ष में करने और स्वयं को तानाशाही की अपेक्षा प्रजातान्त्रिक नेता प्रमाणित करने के लिए कोई-न-कोई योजना बनानी चाहिए। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए 'गोहाटी' में युवा-कांग्रेस का सम्मेलन बुलाया गया। दरअसल यह सम्मेलन केवल संजय गांधी एवं उसके व्यक्तिगत रूप में वफादार सदस्यों का ही प्रदर्शन था ताकि इस बात का अनुमान लगाया जा सके कि संजय गांधी को अपना उत्तराधिकारी बनाना कहाँ तक संगत है? इसमें कांग्रेस के कर्मठ, ईमानदार और वरिष्ठ व्यक्तियों को मौन धारण करना पड़ा, क्योंकि उन्हें भली-भांति आभास हो गया था कि अगर वे मुँह खोलेंगे या गलत कामों का खंडन करेंगे तो उन्हें भी 'मीसा' तथा 'डी० आई० आर०' के अधीन बन्द कर दिया

जायेगा। इस समारोह में एक युवा-नेता ने खुले आम घोषणा कर दी कि आगामी छठी लोकसभा के चुनाव में युवा-कांग्रेस को कम-से-कम २५० सीटें मिलनी चाहिएँ। देश के ऐसे व्यापक वातावरण में श्रीमती इन्दिरा गांधी के गुप्तचर-विभाग की रिपोर्ट ने 'हरी झंडी' दे दी कि चुनाव करवाने का सुनहरा अवसर पुनः कदापि नहीं मिलेगा, क्योंकि इस समय देश के कोने-कोने में श्रीमती इंदिरा गांधी और संजय गांधी का नाम लोकप्रियता की चरम-सीमा को छू रहा है एवं लोकसभा में मनचाहे दो-तिहाई सदस्यों का विजयी हो जाना अति सुगम है।

परिवर्तन जीवन का नियम है। समय अपनी गति अनुसार चलता रहता है, इसी नियम के अनुसार १८ जनवरी, १९७७ को रात्रि राष्ट्र के नाम अपने एक अप्रत्याशित संदेश में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधीजी ने लोकसभा के चुनाव कराने की घोषणा करते हुए कहा – 'आपात्-स्थिति में ढील दी जा रही है, ताकि मान्य राजनीतिक दल उचित गतिविधियों में हिस्सा ले सकें।' इस घोषणा के दूसरे ही दिन देश-भर के सभी दैनिक समाचार-पत्रों में चुनाव-घोषणा पर प्रतिक्रियाओं के साथ विपक्ष के दो प्रमुख नेताओं सर्वश्री मोरारजी देसाई और लालकृष्ण अडवानी की रिहाई का समाचार भी प्रकाशित हुआ। कई समाचार-पत्रों ने यह भी कहा कि यह चुनाव श्रीमती इन्दिरा गांधी के लोकतांत्रिक सिद्धान्त में विश्वास रखने का परिचायक है।

चुनाव की घोषणा पर सबसे महत्त्वपूर्ण प्रतिक्रिया अगले दिन आयी। १९ जनवरी को लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने चुनाव की घोषणा का स्वागत किया और अपने पुराने सैद्धान्तिक मत कि विपक्ष के सभी राजनीतिक दल अपने छोटे-छोटे आकार को मिटाकर राष्ट्रीय दायित्व के एक विशाल अस्तित्व वाली पार्टी के आधार पर अपनी एकता प्रमाणित करें। उन्होंने कहा—"अगर विरोधी दल अपने को विलीन कर एक दल बनाते हैं, तो मैं उस दल का साथ दूंगा, अन्यथा मैं चुनाव-प्रचार से अलग रहूँगा।" यहाँ इस बात का महत्त्व और भी बढ़ जाता है कि लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने मध्यावधि चुनाव के पश्चात् एवं बिहार आन्दोलन के समय विभिन्न राजनीतिक दलों को मिलकर एक सशक्त दल बनाने के लिए प्रेरित किया था और इसके फलस्वरूप बिहार आन्दोलन काफी लोक-प्रिय हुआ था। आपात्कालीन स्थिति घोषित होने से पूर्व जयप्रकाश नारायण ने

भारतीय जनसंघ, भारतीय लोकदल, संगठन कांग्रेस, समाजवादी दल एवं कुछ निर्दलीय दलों के प्रतिनिधियों की एक सभा २०-२१ मार्च को बम्बई में बुलाई थी जिसमें इन सब विरोधी पार्टियों को मिलकर एक राष्ट्रीय दल में विलय करने का निश्चय किया गया। इन दिनों देश में राजनीतिक गतिविधियां बड़ी तीव्रता से सक्रिय थीं। २२-२३ मई को पुनः इन चार दलों के नेताओं की एक बैठक बम्बई में हुई जिसमें जयप्रकाश नारायण को अधिकार दिया गया कि वह नये दल के निर्माण की घोषणा कर दें। २५ मई को देश में आपात्काल को लागू करने की घोषणा हुई एवं विपक्ष के सभी प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। नये दल की योजना अधूरी रह गई, परन्तु इस काल में विपक्ष के नेताओं को जेलों में एक-दूसरे को जान-पहचान का अवसर मिला। कई आपस के मत-भेद समाप्त हो गए। अब चुनाव की घोषणा हो चुकी थी। गिरफ्तार नेताओं की रिहाई से देश में एक नई लहर दौड़ आई, अतः चार दलों का विकल्प होकर एक नए दल का निर्माण होना आवश्यक हो गया। राजनीति में हलचल निरन्तर बढ़ रही थी।

एक ओर सरकार ने राजनीतिक वन्दियों की रिहाई और प्रेस सेंसरशिप समाप्त करने के लिए निर्देश दिए, तो दूसरी ओर श्री जयप्रकाश नारायण के विशेष सन्देशवाहक के रूप में श्रीधर महादेव जोशी संगठन कांग्रेस के तपोनिष्ठ नेता श्री मोरारजी देसाई से मिलने पटना से नई दिल्ली पहुँचे। तभी श्री मोरारजी देसाई ने जनसंघ के नेता श्री अटलबिहारी वाजपेयी, श्री लालकृष्ण अडवानी; समाजवादी दल के नेता श्री अशोक मेहता और श्री राजनारायण तथा भारतीय लोकदल के नेता श्री चरणसिंह को बुलाकर चारों दलों को मिलाकर एक राष्ट्रीय पार्टी बनाने के लिए विस्तार से बातचीत की, ताकि चुनाव में कांग्रेस पार्टी का जोरदार मुकाबला किया जा सके। सभी दल इस विकल्प पर राजी हो गए। अतः इसके फलस्वरूप २३ जनवरी को चार विरोधी दलों ने अपने स्वतन्त्र अस्तित्व को मिटाकर एक नई पार्टी 'जनता पार्टी' में विलय का निर्णय किया (संगठन कांग्रेस, जनसंघ, भारतीय लोकदल और समाजवादी दल)। इस नए बने राजनीतिक दल के प्रधान के रूप में श्री मोरारजी देसाई को चुना गया।

नयी पार्टी के निर्माण की दो नितान्त स्वाभाविक प्रतिक्रियाएँ—कांग्रेस पार्टी

और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी ने इसे अवसरवादी गठबन्धन कहकर निन्दा की परन्तु आपात् स्थिति के विरोधी राजनीतिक तत्त्वों ने 'जनता पार्टी' के गठन का स्वागत किया। उनमें आपात्स्थिति में नयी आशा का संचार हुआ। प्रत्येक नेता को व्यक्तिगत रूप में जानने का अनुभव हुआ। लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने एक लम्बे प्रेस-वक्तव्य के साथ जनता पार्टी का चुनाव अभियान आरम्भ किया। उन्होंने कहा कि इस बार जनता को लोकशाही और तानाशाही के बीच चुनाव करना है, जबकि कांग्रेस ने जवाब में कहा कि यह स्थिरता और अराजकता के बीच चुनाव है। उन्होंने यह भी दावा किया कि इस बार कांग्रेस बड़े पैमाने पर युवा उम्मीदवार खड़े करेगी एवं चुनाव में बहुमत लेगी। इमरजेन्सी में ढील होने कारण राजनीतिक जीवन में धीमे-धीमे ताजगी आ रही थी, लेकिन देश-विदेश के राजनीतिक प्रेक्षक यही अनुमान लगा रहे थे कि कांग्रेस गतिशील है; चुनाव में उसे ही सफलता मिलेगी। उनका यह भी मत था कि कांग्रेस के साथ तीस वर्षों की उपलब्धियों का लम्बा हिसाब है।

बाबू जगजीवनराम का साथियों सहित कांग्रेस से त्यागपत्र

अभी तक यह बात बड़े निश्चय के साथ कही जा रही थी कि इस चुनाव में कांग्रेसी बाजी ले जायेंगे, लेकिन इस सम्भावना पर सबसे गम्भीर प्रश्नचिह्न २ फरवरी को हुआ, जब सर्वश्री जगजीवनराम अपने साथियों के संग जिनमें हेमवतीनन्दन बहुगुणा, नन्दिनी सत्पथी तथा अन्य अनेक कांग्रेस नेताओं ने दल में आन्तरिक लोकतन्त्र के हनन का आरोप लगाते हुए कांग्रेस से त्यागपत्र दे दिए। उन्होंने एक नए दल 'कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी' के निर्माण की घोषणा की। परन्तु यह बात ६ फरवरी को दिल्ली के रामलीला मैदान में हुई सार्वजनिक सभा में स्पष्ट हो गई कि चुनाव के मोर्चे पर कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी और जनता पार्टी के बीच न केवल आपसी सहमति रहेगी, बल्कि दोनों दल एक ही चुनाव-चिह्न पर चुनाव लड़ेंगे। बाबू जगजीवनराम ने विज्ञ राजनीतिज्ञ की तरह उचित समय पर कदम उठाकर कांग्रेस की तानाशाही को कमजोर कर दिया। इन्दिराजी के प्रचारकों ने बाबूजी के त्यागपत्र की निन्दा-प्रस्ताव पास किए और कहा कि एक व्यक्ति के चले जाने से कांग्रेस की गतिशीलता में कोई अन्तर नहीं पड़ता। लेकिन इस घटना से राजनीति में अनेक तरह के उतार-चढ़ाव आने लगे।

इस प्रकार राजनीतिक चुनाव-घटना-चक्र तेजी से घूमने लगा। कांग्रेस पार्टी ने नई उत्पन्न हुई चुनौती का सामना करने के लिए युवा की अपेक्षा पुराने अनुभवी और वरिष्ठ लोगों को मैदान में उतारने का निश्चय किया। कांग्रेस ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के साथ बिगड़े हुए सम्बन्धों की कटुता को भुलाते हुए चुनाव-तालमेल का निर्णय किया जबकि दूसरी ओर जनता पार्टी ने मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी, द्रविड़ मुनेत्र कषगम और अकाली दल के साथ चुनाव-समझौते किए। राजनीतिक हवा धीमे-धीमे जनता पार्टी के पक्ष में बहने लगी। पिछले चुनावों की तरह अनेक उम्मीदवार स्वतन्त्र रूप में मैदान में उतरे, लेकिन इस बार चुनाव स्पष्टतः कांग्रेस और जनता पार्टी की सीधी टक्कर का था। लोक-तन्त्र की मर्यादा का हनन देखकर श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित (पंडित जवाहर लाल नेहरू की बहन और श्रीमती इन्दिरा गांधी की बुआ) भी खामोश न बैठ सकीं। उन्होंने कांग्रेस की तानाशाही के विरुद्ध आवाज उठाकर जनमत को जागृत किया। इस तरह मार्च के मध्य तक परस्पर-विरोधी विचारों, भावनाओं, जोरदार प्रचार और आरोप-प्रत्यारोप के बीच लगभग ३२ करोड़ मतदाताओं को अपने देश के भाग्य का निर्णय करना था। सबके सामने मुख्य प्रश्न था कि श्रीमती इन्दिरा गांधी का अभिनन्दन करते हैं, या जयप्रकाश नारायण का वन्दन—इस गुत्थी का फैसला आम जनता के दिलों पर अंकित था।

चुनाव-अभियान में श्रीमती इन्दिरा गांधी के पक्ष ने प्रचार के बूते पर जनता की राजनीतिक चेतना को नियन्त्रित करना चाहा और जनता पार्टी के उम्मीद-वारों के विरुद्ध धुआंधार प्रचार किया। इन्दिराजी ने स्वयं देश के कोने-कोने में तूफानी दौरे किए। दूसरी ओर जनता पार्टी का नाम, झण्डा और चुनाव-चिह्न जनता के कण-कण में समा गया। बीस महीनों के अत्याचारों से पीड़ित जनता और नसबन्दी से तंग लोगों को प्रतिशोध का अवसर मिल गया। उन्हें वोट मांगने की आवश्यकता ही नहीं थी; वे तो स्वयं तत्पर बैठे थे। जनता पार्टी के नेताओं का स्वागत करने के लिए जनता स्वयं उमड़ आती, बिना पुलिस की सहायता के आत्म-नियन्त्रित बच्चे, बूढ़े आदमी, स्त्रियां, नौजवान—सभी योगदान देते। वे चाहते थे कि कब अवसर आये कि उन्हें शीघ्र मुक्ति मिले। कांग्रेस के पास जनरोष का कोई भी उत्तर न था। गांवों में कोई भी उन्हें सुनने को तैयार न था। कांग्रेस के प्रति बढ़ रहे रोष को देखकर लोकनायक जयप्रकाश नारायण

जनता पार्टी की विजय के प्रति आश्वस्त हो गये और उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि अब केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनेगी। बीमार होने के कारण वह बहुत राज्यों में जाने में असमर्थ रहे। बाबू जगजीवनराम लुधियाना में एक सभा में लोगों की भीड़ देखकर हर्षित हो उठे एवं उन्होंने इतना ही कहा -- कि मुझे जनता के सहयोग पर विश्वास है हम जीत तो चुके ही हैं, केवल मत डालना शेष है।

१७ से २० मार्च का समय विभिन्न राज्यों में चुनाव का समय था। देश की जागरूक जनता ने अपने मत का प्रयोग किया एवं उन्होंने सचमुच ऐतिहासिक निर्णय किया। जनता के इस स्वतन्त्र अभिनन्दन ने तानाशाही के इतिहास को उखाड़ फेंका और लोकशाही को सत्ता के सिंहासन पर बैठा दिया। देश के अधिकांश भागों में कांग्रेस बहुत बुरी तरह पराजित हुई और जनता पार्टी तथा उनके सहयोगियों को लोकसभा में स्पष्ट बहुमत मिल गया। इस प्रकार देश में एक अनूठी जनतांत्रिक क्रांति सम्पन्न हुई।

महारथियों की पराजय

इस जनतांत्रिक क्रांति की प्रलयंकारी उथल-पुथल में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी सहित कितने ही दिग्गज और महारथियों को पराजय का मुँह देखना पड़ा। इनमें मुख्य—सर्वश्री स्वर्णसिंह, बंसीलाल, विद्याचरण शुक्ल, शशीभूषण, हरिभाऊ गोखले, शंकरदयाल शर्मा, बलिराम भगत, अब्दुलगफूर, राजबहादुर, कृष्णचन्द्र पन्त, रोजा देशपांडे और गुरदयालसिंह ढिल्लों इत्यादि अनेक मोहरे थे। दिल्ली, उत्तर-भारत, हरियाणा, बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश और हिमाचल प्रदेश कभी कांग्रेस के सुदृढ़ गढ़ समझे जाते थे, लेकिन इस चुनाव-परिणाम में जनता पार्टी की नयी शक्ति के गढ़ के रूप में उभरे। इन क्षेत्रों में कांग्रेस का एक भी भूतपूर्व मन्त्री या संसद सदस्य अपना राजनीतिक अस्तित्व नहीं बचा पाया।

चुनाव-प्रचार के समय यह समझा जा रहा था कि महाराष्ट्र कांग्रेस – दुर्ग समान सुरक्षित है। मुख्यमन्त्री ने तो यहाँ तक कह दिया था कि राज्य की ४८ सीटें कांग्रेस ही जीतेगी परन्तु चुनाव के नतीजे से सब चकित रह गये, जब राज्य के ४८ में से २७ चुनाव-क्षेत्रों में जनता पार्टी एवं उसके सहयोगी दल जीत गये। बम्बई महानगर में कांग्रेस को एक स्थान भी न मिल सका। राजस्थान

में कांग्रेस को केवल एक सीट मिल सकी। मध्यप्रदेश में ४० सीटों में से एक सीट हाथ आई। दिल्ली, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बिहार में कांग्रेस का बिलकुल सफाया हो गया। पंजाब में जनता पार्टी ने सहयोगी दल अकाली पार्टी और मार्क्सवादी कम्युनिस्ट के साथ मिलकर सभी सीटें जीत लीं। लेकिन सभी राजनीतिक पंडित रायबरेली वाले चुनाव-परिणाम की घोषणा पर स्तब्ध रह गये, जब इन्दिराजी स्वयं उखड़ गईं। संजय गांधी को भी निराशा ही हुई।

ऐसे चुनाव-परिणाम की कल्पना किसी भी राजनीतिक पंडित को न थी। सच तो यह है कि कतिपय अंग्रेजी समाचार-पत्रों के टीकाकार ही नहीं, स्वयं हिन्दी-जगत् के विख्यात दैनिक राजनीतिक संवाददाता भी हिन्दी-भाषी जनता की आन्तरिक पीड़ा को समझने में विफल रहे। इससे यह स्पष्ट हो गया कि आपात् स्थिति में सबसे अधिक अत्याचार इसी हिन्दी-भाषी क्षेत्रों की निर्धन जनता पर ही हुए। दूसरे इससे यह भी अनुमान लगाया गया कि केवल प्रचार के बूते पर लोगों का मन नहीं जीता जा सकता। आधुनिक समाज में सूचना-प्रचार के साधनों की अपनी ही अलग भूमिका है परन्तु मात्र सूचना-प्रचार के साधनों पर या एकाधिकार के बल पर जनता की राजनीतिक चेतना को नियन्त्रित नहीं किया जा सकता। आपात् स्थिति में विपक्ष के प्रमुख नेताओं जिनमें लोकनायक जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई, अटलबिहारी वाजपेयी, जॉर्ज फर्नांडीस इत्यादि अन्य नेताओं के विरुद्ध धुआँधार प्रचार हुआ पर इमरजेंसी में ढील मिलते ही उनकी प्रतिभा और भी अधिक उज्ज्वल होकर सामने आई। इस चुनाव में एक और विशेषता देश की सामाजिक शक्तियों के बदलते परिवेश में हरिजन और मुस्लिम मतदाताओं ने भी जनता पार्टी के पक्ष में मतदान किया एवं कांग्रेस के अटूट आधार में गहरी दरार पड़ गई। इसमें श्री जगजीवनराम, हेमवतीनन्दन बहुगुणा और जामा मस्जिद के शाही इमाम का जनता के समर्थन में आना एक महत्त्वपूर्ण घटना सिद्ध हुई है। आपात्काल में श्रीमती इन्दिरा गांधी जो विश्व की सबसे शक्तिशाली नेता मानी जाती थी, वह अब एक कमजोर नारी समान हो गई। कांग्रेस की हार पर कई विदेशी समाचार-पत्रों ने लिखा कि भारतीय जनता ने स्पष्ट कर दिया है कि तानाशाही अधिक देर तक नहीं चल सकती। जनता का आक्रोश उसकी धज्जियां उड़ा देता है। क्रान्ति शांतिमय ढंग से भी आ सकती है। इसी प्रकार सोवियत समीक्षकों ने प्रधानमन्त्री इन्दिरा

गांधी की हार के लिए आपात् स्थिति के समय हुई ज्यादतियों और गलतियों को दोषी ठहराया।

इस चुनाव में एक अलग तरह का राजनीतिक भूगोल उभरा। चार दलों की एक विकल्प राष्ट्रीय पार्टी 'जनता पार्टी' को स्पष्ट बहुमत मिला एवं फिर से लोकशाही युग का आरम्भ हुआ। २४ मार्च, १९७७ को प्रातः [illegible] बजे दिल्ली में राजघाट पर महात्मा गांधी की समाधि के सम्मुख जनता पार्टी और कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी के नव-निर्वाचित संसद सदस्यों को लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने देश-सेवा की सामूहिक प्रतिज्ञा दिलवायी। यह प्रतिज्ञा-समारोह बड़ी सादगी से परिपूर्ण हुआ, जिसमें सभी सदस्यों ने देश-सेवा का व्रत लिया कि वह गांधी जी के अपूर्ण कार्यों को पूरा करेंगे, देश की सेवा करेंगे और गणतन्त्र तथा स्वाधीनता के अधिकारों की रक्षा करेंगे। संसद-भवन के केन्द्रीय कक्ष के समीप भीड़ एकत्र हो रही थी, क्योंकि वहाँ जनता पार्टी के नेता के नाम की घोषणा होने वाली थी। सेंट्रल हाल खचाखच भरा हुआ था। आजादी के वयोवृद्ध नेता आचार्य कृपालानी और मुक्तिदाता, लोकनायक जयप्रकाश नारायण के विचार-परामर्श ने लोकतन्त्र के निष्ठावान नेता श्री मोरारजी देसाई का नाम प्रधान-मन्त्री पद के लिए घोषित किया। जनता सरकार का नेतृत्व करने के लिए श्री देसाई का नाम श्री राजनारायण ने प्रस्तावित किया और जनता पार्टी के ओजस्वी प्रतिनिधि श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने समर्थन किया। प्रधानमन्त्री का नाम घोषित करने के उपरान्त सेंट्रल हाल हँसी के ठहाकों और तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा। जयप्रकाश नारायण ने मोरारजी देसाई का नाम घोषित करते हुए कहा—"राजशक्ति और लोकशक्ति को मिलकर काम करना है। युवा-शक्ति को सही दिशा में लगाना है। मुझे आशा है कि नये प्रधानमन्त्री इसका पूरा ध्यान रखेंगे।" इस पर श्री मोरारजी देसाई ने आश्वासन दिया कि वे ऐसा ही करेंगे जैसा कि जयप्रकाशजी चाहते हैं।

इस पर जयप्रकाश नारायण ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा—"मैं आपसे उम्र में छोटा हूँ परन्तु अब बहुत दिन जीवित नहीं रहूँगा तथा आपसे पूर्व चला जाऊँगा पर मुझे सन्तोष रहेगा कि मुझे ऐसा आश्वासन दिया गया है।"

थोड़ी देर पश्चात् कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री जत्ती ने राष्ट्रपति भवन के अशोक हाल में श्री मोरारजी देसाई को प्रधानमन्त्री पद की शपथ दिलायी।

श्री जत्ती ने हिन्दी में शपथ पढ़ी और श्री मोरारजी देसाई ने उसे दोहराया। उस समय उपस्थित सज्जनों में विरोध पक्ष—कांग्रेस के नेता यशवंतराव चह्वाण, जनता पार्टी के नेता श्री लालकृष्ण अडवानी, श्री राजनारायण, श्री जार्ज फर्नांडीस, श्री श्यामनन्दन मिश्र तथा सरकार के अनेक वरिष्ठ अधिकारी थे। शपथ-समारोह के तुरन्त बाद ही, नये प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने प्रथम पत्रकार सम्मेलन में पत्रकारों को सम्बोधित करते हुए कहा—

"कल से आप, संसद में जो कुछ भी कहा जाये, उसे पहले की तरह ज्यों-का-त्यों छाप सकते हैं। मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि आपके विरुद्ध कोई कारंवाई नहीं होगी।"

यहाँ पर यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि इस सर्वसम्मत निर्णय के समय बाबू जगजीवनराम और उनके सहयोगी उपस्थित न थे। जगजीवनराम ने अपने निवास-स्थान पर पत्रकारों को सूचित किया कि कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी संसद और बाहर अलग दल के रूप में काम करेगी। वह नयी सरकार को समर्थन देगी पर अपने घोषणापत्र के अनुरूप कामों में ही।" परन्तु सायंकाल रामलीला मैदान मे एक सार्वजनिक सभा हुई, इसमें बाबू जगजीवनराम, हेमवती-नन्दन बहुगुणा अपने साथियों सहित शामिल हुए। राजनीतिक दृष्टि से इसमें महत्त्वपूर्ण वक्ता श्री जगजीवनराम ही थे। उन्होंने अपने भाषण में चुनाव के माध्यम से हुई महान् क्रान्ति का उल्लेख किया, एवं कहा, "अब अगला काम गरीबी की सतह के नीचे दबे आबादी के बहुत बड़े हिस्से को ऊपर उठाने का होना चाहिए।" इसी सभा में प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने लोगों को निर्भय बनने की बात कही। विनम्र भाव से मोरारजी भाई ने यह उद्‌गार प्रकट किया—

"हमसे जो गलतियाँ हों, जनता उन्हें कहने में संकोच नहीं करे। हमारा शान्ति में पूर्ण विश्वास है पर हम शक्ति, लाठी या गोली के पक्ष में नहीं हैं। हमें श्मशान की शान्ति नहीं चाहिए, हम विश्वास दिलाते हैं कि हम जनता के सेवक होकर काम करेंगे…मैं जनता से प्रार्थना करता हूँ कि हमसे जब भी कोई असावधानी हो, जनता हमारे कान पकड़े—वह पूरी तरह सावधान रहे। मैं यकीन दिलाता हूँ कि हमने जो वचन दिये हैं, उन्हें अधिक से अधिक पूरा करने की कोशिश

करेंगे। इसमें हमें जनता का सहयोग और सहकार चाहिए।"

वहां उपस्थित जनता की आँखें अश्रुओं से भीग गईं।

पहले कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी के अध्यक्ष बाबू जगजीवनराम मोरारजी के मन्त्रिमण्डल में शामिल न हुए परन्तु दो दिन पश्चात् रक्षामन्त्री का कार्य-भार सम्भालते हुए उन्होंने कहा—

> "श्री जयप्रकाश नारायण मेरे पुराने साथी हैं। मेरे मन में उनके प्रति भारी सम्मान है। उनकी ख्वाहिश मेरे लिए आदेश है और मैं बिना शर्त प्रधानमन्त्री को अपना सहयोग अर्पित करता हूँ। मैं चाहता हूँ कि बाबू जयप्रकाश जिस नये भारत का निर्माण चाहते हैं, वह शीघ्र बन जाये। ऐसा भारत—जिसमें रोटी मिले, कपड़ा मिले और प्रतिष्ठा मिले। जयप्रकाशजी के रक्त की एक-एक बूंद देश के काम में लग रही है, तो हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम उनके सपनों को साकार बनाएँ।"

इसी तरह जार्ज फर्नांडीस ने मोरारजी में अपनी निष्ठा प्रकट करते हुए कहा—

> "मोरारजी भाई हमारे नेता है और हम जनता पार्टी की सरकार को पुख्ता बनाये रखेंगे। इसे तोड़ने की कोई भी कोशिश नाकामयाब कर दी जायेगी।"

इस तरह नयी सरकार के स्थायित्व और व्यापक सामाजिक आधार की नौका मोरारजी देसाई ने सँभाल ली। इस चयन का समस्त राष्ट्र ने मुक्त हृदय से स्वागत किया।

जनता पार्टी का अस्तित्व और मोरारजी



केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनने से देश में २५ जून, १९७५ से प्रारम्भ हुए अत्याचारों से मुक्ति मिल गई एवं लगभग तीस सालों तक देश की बागडोर सम्भालने वाली कांग्रेस को प्रथम बार प्रतिपक्ष में बैठना पड़ा। जनता पार्टी की जीत पर विश्व चकित रह गया। जो लोग कांग्रेस के गुणगान करते नहीं थकते थे, वही अब तीखी आलोचनाओं पर उतर आये। वे एक-दूसरे को ही दोषी ठहराने लगे। अपनी पार्टी की पराजय पर संसद में कांग्रेस प्रतिपक्षी नेता श्री चव्हाण ने विनम्र शब्दों में एक सभा को सम्बोधित करते हुए कहा—"हम जनता के निर्णय का आदर करते हैं। अब यह जरूरी है कि कोई कांग्रेस जन पुनः ऐसी गलती न करे और जनता को आश्वस्त करे कि गत दो वर्षों में जो कुछ हुआ, वह एक अपवाद था और अब फिर ऐसा कभी नहीं होगा। कांग्रेस एक ऐसा रथ है, जिसके पहिये धँस गये हैं एवं उसके घोड़े बेलगाम हो गए हैं। यदि रथ का सवार अपने निश्चय पर दृढ़ है तो रथ फिर चल निकलेगा। जो घोड़े काबू में नहीं आएँगे, उनको त्याग दिया जायेगा और फिर नये घोड़े ही रथ में जोते जाएँगे।" श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी कांग्रेस की असफलता पर खेद प्रकट करते हुए कहा कि हमें उन लोगों से सहानुभूति है, जिन पर आपात-स्थिति में अत्याचार हुए।

पहली मई यानि 'मई दिवस' के दिन प्रगति मैदान के मध्य 'हाल ऑफ नेशंस' में नई पार्टी के स्थापना सम्मेलन में जनता पार्टी के चारों दलों ने अपना

पृथक् अस्तित्व समाप्त करके एक 'राष्ट्रीय संगठन' का रूप ग्रहण किया। विभिन्न पार्टियों के अध्यक्षों ने अपने संक्षिप्त भाषण में घोषणा की कि दलों ने अपने अस्तित्व समाप्त कर क्रान्ति की नई प्रतीक 'जनता पार्टी' में विलीन होने का निश्चय किया है, जैसे छोटी-छोटी नदियां सागर में मिलकर अपना अस्तित्व मिटाते हुए 'महासागर' का रूप धारण कर लेती हैं। श्री नानाजी देशमुख ने इस सम्मेलन का संयोजन किया। मंच के दोनों ओर महात्मा गांधी और लोकनायक जयप्रकाश नारायण के चित्र लगे थे। मंच पर जनता पार्टी के प्रमुख नेताओं के अतिरिक्त वयोवृद्ध नेता आचार्य कृपालानी और श्रीमती विजयलक्ष्मी पंडित भी उपस्थित थे। दोनों ने सम्मेलन को सम्बोधित किया। श्री जयप्रकाश नारायण की अनुपस्थिति में श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने उनका सन्देश पढ़कर सुनाया—

> "हालांकि मैं दलगत राजनीति से अलग हूं, फिर भी जनता पार्टी को मैं अपनी पार्टी मानता हूं। नयी पार्टी का यह सौभाग्य है कि उसे श्री मोरारजी देसाई जैसा अनुभवी और वरिष्ठ नेता प्रधानमन्त्री और अध्यक्ष के रूप में मिला है। आम जनता, विशेषकर छात्र और युवक जनता पार्टी से चमत्कारों की आशा न करें। देश की समस्याएँ गम्भीर और व्यापक हैं, जिनका सामना करने में लम्बा समय लगेगा, किन्तु मुझे एक बात में तनिक भी शक नहीं है—वह यह कि प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई और उनके साथी अपनी योग्यता के अनुसार देश की सेवा करने में कोई कसर नहीं रखेंगे। वे सामूहिक कार्य और जिम्मेदारी की पद्धति अपनाएँगे। मेरा वर्षों से यह विश्वास रहा है कि जब तक देश में द्विदलीय व्यवस्था का विकास नहीं होता, तब तक हमारा जनतन्त्र मजबूत और स्थायी नहीं होगा। इसलिए मुझे प्रसन्नता है कि चार जनतान्त्रिक दलों ने एक वर्ष पूर्व बम्बई में जो पहल मेरे कहने पर की थी, वह आज फलीभूत हो गई है और भारत के राजनीतिक क्षितिज पर 'जनता पार्टी' के रूप में एक नये दल का उदय हुआ है।"

वन्दे मातरम् के गान के पश्चात् विभिन्न प्रतिनिधियों ने एक मिनट का मौन रखकर आपातकाल के शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। जैसे-जैसे प्रमुख नेता मंच पर पहुंचे, विशाल भीड़ ने उनका देर तक अभिवादन किया। सभी के

चहरे प्रसन्नता और उल्लास से लाल हो गये थे।

जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री मोरारजी देसाई ने नया दल जनता को समर्पित करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा—"जनता पार्टी का प्रादुर्भाव भारतीय जनता के द्वारा अपनी खोई हुई स्वाधीनता को प्राप्त करने और लोकतन्त्र के राजपथ पर अपनी खण्डित यात्रा को फिर से आरम्भ करने के संकल्प से हुआ था। प्रचण्ड जन-समर्थन और उत्साहपूर्ण तथा प्रबल जन-स्वीकृति का ही परिणाम था कि विगत चुनावों में जनता पार्टी को ऐतिहासिक विजय प्राप्त हो सकी। अब वह अपने कोटि-कोटि समर्थकों और शुभेच्छुओं को अपने इस परिवार में सम्मिलित होने का निमंत्रण देती है ताकि वह जन-संकल्प की पूर्ति का उपयोगी एवं जीवन्त उपकरण बन सके।" तालियों की गड़गड़ाहट में प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने कहना जारी रखा कि जनता पार्टी का यह दृढ़ विश्वास है कि देश में आपात्कालीन स्थिति जैसी अवस्था पुनः उत्पन्न नहीं होगी जिससे जनता की स्वतन्त्रता छीन ली जाये। उन्होंने राष्ट्र के समक्ष उपस्थित समस्याओं – बेकारी, अज्ञानता, निरक्षरता तथा भय जैसी भयावहता को मिटाने के लिए ठोस कार्य करने का संकल्प किया। निर्धनता के नीचे दबी ७० प्रतिशत जनता को ऊँचा उठाना है। इसमें जनता के सहयोग की भी आवश्यकता है जैसा कि उन्होंने इस चुनाव में उत्साह और जागरूकता दिखाई है। उन्होंने इस सन्देश में विद्यार्थियों, शिक्षकों, श्रमिकों एवं कर्मचारियों को शान्तिमय ढंग से काम करने का आह्वान भी किया।

श्री मोरारजी देसाई ने सभी समर्पित देशवासियों को नये दल में योगदान देने के लिए आमन्त्रित किया ताकि सभी मिल-जुलकर राष्ट्र का निर्माण कर सकें।

संगठन कांग्रेस के श्री अशोक मेहता ने कहा कि संगठन कांग्रेस अपना अस्तित्व समाप्त करके आज जनता पार्टी में शामिल होती है।

सोशलिस्ट पार्टी की ओर से श्री जार्ज फर्नांडीज ने कहा कि मैं भूतपूर्व सोशलिस्ट पार्टी के भूतपूर्व अध्यक्ष के नाते यह घोषणा करता हूँ कि देश में समाजवाद लाने के लिए सोशलिस्ट पार्टी ने अपने को जनता पार्टी में विलीन कर लिया है।

जनसंघ की ओर से श्री लालकृष्ण अडवानी ने कहा कि जनसंघ की प्रति-

निवि सभा ने एक स्वर से फैसला किया है कि जनसंघ जनता पार्टी में मिल जाये।

इसी प्रकार भारतीय लोकदल के अध्यक्ष चौधरी चरणसिंह ने कहा कि मैं घोषणा करता हूँ कि भारतीय लोकदल आज जनता पार्टी में मिल गया है।

सबके पश्चात् श्री चन्द्रशेखर ने विनम्र स्वर में कहा कि मैं यहाँ आपका स्वागत और अभिनन्दन करता हूँ। अब समाज बदलने का एक बड़ा काम आपको और हमें मिलकर करना है।

अंत में प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने कहा कि हमने मिलकर चुनाव लड़ा था और सरकार में शामिल हुए लोगों के दुःख-दर्द दूर करने का सामूहिक बीड़ा उठाया। अभी यह शब्द मोरारजी देसाई के मुख पर ही थे कि सहसा बाबू जगजीवनराम मंच पर आ गये और जिन्दाबाद के नारे से सारा हाल गूँज उठा। तभी श्री मोरारजी देसाई ने बतलाया कि आज बाबूजी उन्हें मिले थे और अपने दल को जनता पार्टी में विलय करने की घोषणा का अधिकार मुझे सौंपा था, लेकिन मुझे उनके आने की प्रतीक्षा थी। उन्होंने जगजीवनराम के दल 'कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी' के विलय होने का फैसला सुनाया और उन्होंने श्री जगजीवनराम को इस देशभक्तिपूर्ण निर्णय पर बधाई दी।

इसी समारोह में बाबू जगजीवनराम ने कहा—"आज प्रजातन्त्र की बुनियाद पक्की हुई है। आज जो कुछ भी हुआ है इसका उदाहरण इतिहास में कहीं भी नहीं मिलता है। राजनीतिक संस्थाएँ एक उद्देश्य को लेकर एक हो गयी हैं पर यह जनता सरकार सही अर्थ में जनता सरकार तब होगी, जब यह अल्पसंख्यकों के मन से सभी प्रकार के भय निकाल देगी।"

इस शुभ अवसर पर वयोवृद्ध सेनानी आचार्य कृपालानी ने अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया "जनतन्त्र मात्र सरकार का एक खास स्वरूप नहीं होता, इसे जीवन-पद्धति में ढाला जाना चाहिए। तभी यह अक्षुण्ण रह सकेगा। यदि राजनीतिक आजादी को मजबूत बनाना है तो सामाजिक आर्थिक जनतन्त्र को भी पुष्ट किया जाना चाहिए।"

श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित ने इस सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा—"देश की जनता नारों से भ्रमित न हो और न ही सरकार को नारों से

भ्रमित करें···नारे कितने ही लुभावने क्यों न हों परन्तु असली शक्ति कार्य और सेवा में होती है।"

श्री राजनारायण ने कहा कि विगत तीस वर्षों की बख्शीश की राजनीति थी, अब बदलाव की राजनीति है। जनता पार्टी के कहने-करने में अन्तर नहीं होगा।

श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने भी इस सम्मेलन में अपने विचार रखते हुए कहा कि "जनता पार्टी के विधिवत् निर्माण से एक बड़ा स्वप्न पूर्ण हो गया है। हम अब लोकतन्त्र के राजपथ पर चलकर जिस तरह राज बदला है, वैसे ही समाज को बदलेंगे।"

इस तरह जनता पार्टी के राष्ट्रीय समारोह में जनता पार्टी में एकीकरण स्वीकृत हुआ।

इसके पश्चात् रामलीला मैदान में जनता पार्टी के खुले अधिवेशन में सर्व-सम्मति से श्री चन्द्रशेखर को नया अध्यक्ष बनाया गया। वहाँ उपस्थित हजारों की संख्या में व्यक्तियों ने तालियों से श्री चन्द्रशेखर का स्वागत किया। उन्होंने अपने अध्यक्ष पद के लिए सभी प्रतिनिधियों को धन्यवाद दिया एवं कहा कि "जनता पार्टी कुछ पार्टियों का संगठन नहीं है बल्कि यह एक ऐसा आन्दोलन है, जिसके प्रभाव से बाहरी देशों की जनता अन्याय और तानाशाही के विरुद्ध उठ खड़ी हुई है। अब भारत को तानाशाही के शिकंजे में जकड़ने की कोई चेष्टा नहीं करेगा, लेकिन सरकार बदल जाने से समाज नहीं बदल जाता। जो शोषित उपेक्षित, पीड़ित और बेरोजगार है, उनकी समस्त समस्याएँ हमारे सामने हैं। उन्हें हल करने के लिए देश के प्रत्येक वर्ग का सहयोग जरूरी है।···हमें आजादी मिली है, लेकिन आजादी का मतलब शोषण, तस्करी और भ्रष्टाचार की आजादी नहीं है। यह शोषितों को दबाकर रखने की आजादी नहीं है। हमारा देश एक ऐसे उपवन की तरह है, जिसमें तरह-तरह के फूल खिले हैं। अगर एक भी कली इस बाग की मुरझाती है तो यह चमन, चमन नहीं रहेगा।"

'कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी' ने अपने ५ मई के राष्ट्रीय-सम्मेलन में जनता पार्टी में विलय का प्रस्ताव पास किया। इस अवसर पर बाबू जगजीवनराम ने अपने

प्रतिनिधियों के समक्ष कहा कि देशहित के सम्मुख छोटे-छोटे स्वार्थों और उद्देश्यों को सदैव तिलांजलि देनी होती है। जनता पार्टी भी अपना ही घर है। इसमें यह प्रश्न नहीं है कि कोई हमारा स्वागत करता है या नहीं—हम अवश्य इस नये घर में प्रवेश करेंगे और इसे मजबूत बनाने में दिन-रात एक कर देंगे। अपना घर सदैव अपना घर ही रहता है।

अतः पांच पार्टियों का विलय होने पर एक राष्ट्रीय दल 'जनता पार्टी' का कार्य बड़े ही उल्लासमय वातावरण में सद्भावना से सम्पन्न हुआ।

प्रभावशाली व्यक्तित्व



संसार में कोई भी व्यक्ति प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला हो सकता है। इसके लिए किसी प्रकार की भौतिक साधना की आवश्यकता नहीं है। यह तो केवल मनुष्य के विकास, व्यक्तिगत गुणों पर निर्भर करता है। इसी तत्व के आधार पर मोरारजी देसाई का प्रभावशाली व्यक्तित्व, महानता, सफलता, सिद्धि और निष्ठा का ही समुच्चय है। वह नम्रता, सरलता, निर्मलता के प्रतीक हैं। अगर यह कह दिया जाये कि मोरारजी का जीवन गुणों की खान है तो अप्रिय नहीं होगा। मोरारजी देसाई का जन्म महात्मा गांधीजी की तरह साधारण परिवार में हुआ और पारिवारिक दायित्वों के बोझ तले दबकर दिव्य देवत्व की मूर्ति बनकर अपने समस्त जीवन को सेवा, त्याग और साधना का ज्वलन्त रूप दिया। वह इसी श्रेष्ठतम व्यक्तित्व के कारण सभी को मुग्ध कर लेते हैं। उनका जीवन दृढ़ता और कोमलता का अद्भुत संगम है।

पारिवारिक जीवन

मोरारजी देसाई का पारिवारिक और राजनीतिक जीवन गाड़ी के दोनों पहियों के समान है। उन्हें अलग से देखना असम्भव है। जैसे गाड़ी के एक पहिए के टूट जाने से गाड़ी बेकार समझी जाती है, ठीक उसी भाँति अगर उनके पारिवारिक या राजनीतिक जीवन को अलग कर दिया जाये, तो जीवन का अस्तित्व टूट जायेगा। राजनीतिक कार्य में व्यस्त मोरारजी देसाई जैसे ही घर आते हैं, वह घर के हो जाते हैं। कभी-कभी यह अनुमान लगाना कठिन हो जाता है कि

यहीं मोरारजी प्रधानमंत्री हैं! परिवार में वह बड़े विनम्र, अल्पभाषी तथा संयत हैं।

श्रीमती गजराबेन देसाई अत्यन्त सरल और धार्मिक विचारों वाली नारी हैं। उनका जीवन बिल्कुल पुरानी परम्परा के अनुसार है, उन्होंने एक मौन तपस्विनी की भाँति अपना सारा जीवन अपने पति के चरणों में अर्पित कर दिया। उनका जीवन विशेषकर घर तक ही सीमित रहा, लेकिन वह राजनीतिक गतिविधियों की पूरी जानकारी रखती हैं। इतना होने पर भी वह मोरारजी के लिए एक प्रेरणा-स्रोत रही हैं। उन्होंने मोरारजी के साथ मद्य-निषेध आन्दोलन में भाग लिया एवं छः मास तक जेल-यात्रा भी की है। पहले-पहल वह अपने पति के साथ विभिन्न सभा-समारोहों में बड़ी उत्सुकता के साथ भाग लिया करती थी, परन्तु १९५८ में उनके पैर में चोट आ गई; तब से वह अधिक बाहर नहीं निकलतीं।

श्रीमती गजराबेन देसाई का जीवन अपने पति के समान अति सरल, सादा एवं तपस्यामय; सिद्धान्तों में अडिग है। उनका विश्वास है कि अपने पति को राजनीतिक क्षेत्र में कुशल कार्यों में पूर्ण सहयोग देना और अन्य सुविधा जुटाना ही उनका परम कर्त्तव्य है। परिवार बिल्कुल छोटा है। इसमें श्रीमती गजराबेन के अतिरिक्त छोटी बहन किबकोबेन; पुत्र कान्ति भाई और एक पुत्री है। वे दोनों विवाहित हैं।

बेटी की आत्महत्या

मोरारजी देसाई का ईश्वर में अटूट विश्वास है। वह कहते हैं कि संसार में जो भी होता है, वह उस सर्वशक्तिमान् ईश्वर की इच्छा से होता है। मानवीय जीवन ईश्वर की कृपा का फल है। इसीलिए वह कभी उदास और खिन्न नहीं होते। प्रभु की आस्था के कारण मानव को शान्ति, तृप्ति एवं निश्चिन्तता प्राप्त होती है। वस्तुतः मनुष्य ईश्वर की विराट् ब्रह्माण्ड योजना का एक तिनका मात्र है। किसी घटना से विचलित या चिन्तित होना अच्छा नहीं है। उनकी इन धार्मिक आस्थाओं के कारण उन्हें अनेक कष्टों का सामना भी करना पड़ा, किन्तु वे अपने निश्चय में दृढ़ रहे। सन् १९६३ में उनकी बेटी इन्दु, जो मेडीकल कालेज की छात्रा थी, ने अपनी जाति के बाहर एक युवक से विवाह करने की घोषणा कर दी। धार्मिक विचारधारा के आधार पर मोरार जी न

माने, इन्दु को बहुत समझाया गया। आखिर उसने घर की छत पर से नीचे कूद कर आत्महत्या कर ली। इस सूचना पर उन्होंने केवल इतना ही कहा कि "इन्दु की आत्महत्या उनके जीवन की ट्रेजेडियों में से एक है, परन्तु मेरा किसी से भी लगाव नहीं। अपनी ओर से मैं कभी रोता नहीं हूँ।" अतः मोरारजी ने इसे जीवन की एक साधारण घटना से अधिक महत्त्व नहीं दिया।

नियम और आत्म-संयम

मोरारजी देसाई का जीवन नियम और आत्म-संयम का अद्वितीय उदाहरण है। जीवन के ८१ वर्ष की आयु में भी वह युवकों से अधिक स्वस्थ, उत्साही दिखाई देते हैं। उन्होंने एक प्रेस सभा में कहा कि, 'मुझे ८१ वर्ष का न समझकर केवल १९ वर्ष का युवक समझें, क्योंकि मेरा जन्म-दिवस चार वर्ष पश्चात् आता है' (मोरारजी का जन्म दिवस २९ फरवरी है जो एक लीप का साल है अथवा चार वर्ष में एक बार आता है) इससे स्पष्ट हो जाता है कि वह कितने स्वस्थ और कुशल व्यक्ति हैं। इसका क्या रहस्य है? मोरारजी इस बात का सदैव ध्यान रखते हैं कि उनका प्रत्येक कार्य निश्चित समय पर समाप्त होना चाहिए।

मोरारजी देसाई की दिनचर्या के कुछ नियम हैं। वह समय पर सोते हैं और प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व उठ जाते हैं। सर्वप्रथम योगासन और ईश्वर-भजन करते हैं। थोड़ा समय चरखा कातने में व्यतीत करते हैं। सफाई के विषय में वह बहुत कठोर हैं। नित्य प्रातः दो घंटे तक स्नान और दिन में कई बार वस्त्र बदलना उनकी आदत है। वे कट्टर शाकाहारी हैं। अंडे, पत्ते वाली सब्जियाँ, मैदा, चीनी से परहेज करते हैं। सन् १९२१ के पश्चात् चाय या कॉफी या अन्य किसी प्रकार के मादक द्रव्य का सेवन नहीं किया। भोजन में केवल फल, दूध और सादा फुल्का तथा हरे साग का ही प्रयोग करते हैं और वह भी एक समय ही। धूम्रपान से सख्त नफरत है। इस बात को वह स्वयं स्वीकार करते हैं कि १९२५ के पश्चात् उन्होंने सैक्स का परित्याग कर दिया था।

मोरारजी देसाई का आत्म-संयम जीवन का दर्पण है। उनका रहन-सहन बहुत सादा है। वह आयुर्वेद चिकित्सा के समर्थक हैं और डॉक्टर इत्यादि से सलाह-मशविरा नहीं लेते। इंजेक्शन लगाने से इन्कार कर देते हैं। उनका मत

है कि ये औषधियाँ पशुओं से प्राप्त की जाती हैं। अब विदेशों में भी आयुर्वेद चिकित्सा के सिद्धान्त को मान्यता दी जा रही है।

मोरारजी देसाई ने अपने जीवन को देश और समाज के लिए समर्पित कर दिया है। वह उतने ही सजग दिखाई देते हैं, जितने युवावस्था में रहे हैं। उन्होंने जीवन में कर्त्तव्य का पालन करना, लोभ से दूर, द्वेष की भावना, दुर्व्यवहार न करना ही सीखा है। वह कभी किसी की हँसी नहीं उड़ाते। वह दूसरों का दुःख देख नहीं सकते। वह सबसे बड़ा सुख यही समझते हैं कि जन-मानस दूसरों के कष्ट और दुःख दूर करने में अपनी पूर्ण शक्ति लगा दे। यही ईश्वर की आराधना का सर्वोत्तम उपाय है। प्रतिशोध और प्रतिकार की भावना से मानव गिरावट की ओर जाता है। प्राचीन ऋषियों की तरह 'सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात मा ब्रूयात् सत्यमप्रियम्' (सदा सत्य बोलो लेकिन प्रिय सत्य बोलो, अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए) के सिद्धान्त में उनकी निष्ठा और अटूट विश्वास है। वह स्वभाव से कठोर अवश्य दिखाई देते हैं, किन्तु उनका हृदय कोमलता और मिठास का अनमोल खजाना है। उन्होंने स्वयं अपने जीवन के अनुभव से सीखा है। वह जिस भी स्थिति में रहे, सदैव गौरव का विषय ही रहे।

पवित्र जीवन का प्रतीक

मोरारजी देसाई का जीवन पवित्रता का एकमात्र प्रतीक है। इन्होंने अपने मनोबल एवं दृढ़ आस्था के बल पर ही तीन बार असफल रहने के पश्चात् भी प्रधानमन्त्री बनकर सत्ता के सर्वोच्च शिखर को छुआ है।

श्री देसाई 'कर्म' के प्रबल सिद्धान्त में विश्वास रखते हैं। उनका तर्क है कि मानवीय जीवन अनमोल है। भौतिक कामनाएँ त्याग कर ही ध्येय की प्राप्ति सम्भव है। आपात्काल स्थिति में उन्होंने भगवद्गीता का अध्ययन किया। गीता के निम्नलिखित श्लोक में उन्होंने जीवन-दर्शन को अनुभव किया है—

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्म फल हेतुर्भू मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥"

अर्थात् मनुष्य को अपने कर्म का अधिकार मिलता है, फल का नहीं। मानव को फल की इच्छा से कर्म नहीं करना चाहिए और न ही कर्म से विरत होना

चाहिए। इस तरह मोरारजी देसाई ने भारतीय-संस्कृति और परम्परा में अपने चरित्र एवं व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया है, जो सराहनीय है।

सच्चे राष्ट्रवादी

मोरारजी देसाई सच्चे राष्ट्रवादी रहे हैं। अपना राजनीतिक जीवन, इन्होंने १६३० से आरम्भ किया है, विरोधी परिस्थितियों में भी अपने आदर्श और मान्यताओं पर चलते रहने का साहस किया है। वह ब्रिटिश सचिवों की गलतियों पर भी अंगुली उठाने से कदापि नहीं चुके। अँग्रेज अधिकारी भी आपकी इस वृत्ति की प्रशंसा करते थे। इसी के आधार वह इन्हें अपने घनिष्ठ मित्रों में से समझते थे। जब मोरारजी राजस्व मन्त्री थे, तो गवर्नर ने किसी व्यक्ति को नौकरी देने की सिफारिश की। इन्होंने स्पष्ट शब्दों में इन्कार कर दिया। थोड़े दिनों पश्चात् एक बैठक में गवर्नर ने इस बात की चर्चा करते हुए सद्भावना में कहा—

—अगर मेरे पास बन्दूक होती तो ऐसे मित्र को शूट कर देता।
आप केवल यह ब्रिटिश शासक की शान होने के नाते करते।

इस पर दोनों खिलखिलाकर हंस दिये। अर्थात् घटना मोरारजी के खरी बात कहने का उदाहरण नहीं, बल्कि उनकी विशालता और स्पष्टवादिता का चिह्न था। ब्रिटिश शासक मोरारजी के व्यक्तित्व से अत्यन्त प्रभावित थे। एक बार मोरारजी राजस्व एवं गृहमन्त्री के रूप में किसी सम्मेलन के सम्बन्ध में शिमला गए थे। बम्बई के गवर्नर सर रोगर लमले (Sir Rogar Lumley) ने एक राजस्व समस्या पर मोरारजी को मिलने का सन्देश भेजा। मोरारजी के हिन्दुस्तानी वेश-भूषा के विषय में वह पहले से ही परिचित थे। उन्होंने पहरेदार को सूचित कर दिया था कि अगर कोई व्यक्ति उन्हें साधारण कुर्ता, धोती में मिलने आये, उसे अन्दर आने की अनुमति दे दी जाय। मोरारजी अपने निश्चित समय पर पहुँच गये, वही हुआ जिसकी आशा न थी। पहरेदार ने गेटपास देखने के लिए गाड़ी को रुकवा लिया। दूसरे ही क्षण मोरारजी के कुर्ता-धोती देखते ही वह पीछे हट गया एवं गाड़ी को निरीक्षण के बिना ही अन्दर जाने दिया। इस पर मोरारजी तनिक सहज हो गये।

मोरारजी के व्यक्तित्व से केवल ब्रिटिश शासक ही प्रसन्न न थे, बल्कि

स्वतन्त्रता-संग्राम में वह महात्मा गांधी और वल्लभ भाई पटेल के सम्पर्क में रहे एवं एक कुशल प्रशासक के रूप में विभिन्न आन्दोलनों का नेतृत्व किया। वह दृढ़-संकल्पी और अनुशासनप्रिय नेता माने जाते हैं। हम निस्संदेह कह सकते है कि मोरारजी का नाम उन विज्ञ राजनीतिज्ञों में है, जिन्होंने अपने खून-पसीने से भारत के इतिहास का निर्माण किया है।

श्री देसाई के जीवन पर महात्मा गांधी का गहरा प्रभाव पड़ा। गांधीजी के सिद्धान्त और विचार-धारा को उन्होंने अपने ढंग में ही अपनाया है। इनके अतिरिक्त सरदार वल्लभ भाई पटेल के अद्वितीय व्यक्तित्व की भी छाप मोरारजी पर बैठ गई। सरदार पटेल गांधीजी के दाहिने हाथ थे। उन्होंने समस्त भारत के नेतृत्व के साथ गुजरात और महाराष्ट्र के घर-घर में स्वतन्त्रता का सन्देश पहुँचाया। वह देश के उन उच्चकोटि के नेताओं में से एक थे, जिनकी आज्ञा का उल्लंघन करना पाप समान समझा जाता था। सरदार एक जौहरी समान थे। वह मोरारजी की निर्भीकता, स्पष्टवादिता और विचारों की सुदृढ़ता से भली-भांति परिचित थे। सरदार पटेल के साथ रहते हुए मोरारजी में भी वही गुण विकसित हो गये। अतः उन्होंने महात्मा गांधी की सादगी, चरित्र, सत्य, अहिंसा और सरदार पटेल की सुदृढ़ता, कार्य-कुशलता के सिद्धान्तों को कार्य-रूप में करने का संकल्प किया।

मोरारजी देसाई अपनी सैद्धान्तिक और बौद्धिक शक्ति को अपने तक ही सीमित रखने के इच्छुक नहीं हैं, वल्कि इन सिद्धान्तों को जन-जीवन के उपयोग के लिए व्यावहारिक रूप देने को तत्पर रहते हैं। अपने निकटतम सम्बन्धी के सम्मुख भी सत्य से विमुख नहीं होते, भले ही इसके लिए उन्हें इसके प्रति कितनी हानि सहन करनी पड़े। दूसरों के दोष को वह तपाक से कह देने की क्षमता रखते है। इस वृत्ति से कुछ लोग उनके स्वभाव की कठोरता समझते हैं, किन्तु यह केवल सिद्धान्त, निर्मलता और स्पष्टता के कारण तथा सांसारिक सुखों को तिलांजलि समान है, सत्य की विजय है।

मोरारजी स्वयं इस बात को स्वीकार करते हैं कि मेरे हृदय में किसी के प्रति कटुता नही है। उनको केवल दो पुस्तकें प्रिय हैं—एक भगवद्गीता और दूसरी बापू की आत्मकथा। एक आलोचक ने मोरारजी के विषय में लिखा है कि उनका जीवन गुलाब के पौधे समान है, इसमें कांटे भी हैं और गुलाब के फूलों की

सुगन्ध भी है। आपात्काल-स्थिति में मोरारजी ने अपने स्वभाव में बहुत परिवर्तन किया है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं लेना चाहिए कि वह अपने निश्चय से हट गए हैं। मोरारजी के अद्वितीय व्यक्तित्व के विषय में श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने कहा कि मुझे तो प्रथम दर्शन में ही उनसे प्यार हो गया है। उनके विषय में उन्होंने कहा—

नजर ऊँची
कमर सीधी
दमकता रौब से चेहरा
बुरा मानो, भला मानो
वही तेजी, वही नखरा।

कैसा अलौकिक और प्रभावशाली व्यक्तित्व है मोरारजी का!

बादल छँट गये—
आओ ! नव भारत का निर्माण करें

☐

लोकनायक जयप्रकाश नारायण की परिकल्पना और देश में एकता की सामूहिक जन-इच्छा अनुसार जनता पार्टी अपने अस्तित्व में आ गई। यहाँ जयप्रकाश नारायण के रचनात्मक दिशा के सपने और विश्वास की रूपरेखा, उन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। उनके अनुसार—

> "देश का नया इतिहास आप बनाने जा रहे हैं। मोरारजी देसाई इस बात से सहमत होंगे कि समाज में परिवर्तन सिर्फ राज्य-शक्ति से नहीं होता। उसके लिए जन-शक्ति का सहयोग भी आवश्यक है।"

आज भारत राज्य-शक्ति और लोक-शक्ति के बीच पारस्परिक सहयोग के ऐतिहासिक मोड़ पर खड़ा है। इसके लिए गांधीजी के आदर्शों, स्वराज्य और गांधीवादी मूल्यों का दर्शन और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है। महात्मा गांधी के अनुसार—"सच्चा स्वराज्य थोड़े से लोगों के सत्ता में आ जाने से नहीं, बल्कि सत्ता का दुरुपयोग होने पर सारी जनता में उसका प्रतिकार करने की क्षमता आने से हासिल होगा। दूसरे शब्दों में, स्वराज्य जनता में इस बात का ज्ञान पैदा करके प्राप्त किया जा सकता है कि सत्ता पर कब्जा करने और उसका नियमन करने की क्षमता उसमें है।"

एक अन्य स्थान पर महात्मा गांधीजी ने अपने सपनों के स्वराज्य के विषय में स्पष्ट किया है कि—

"मेरे सपनों का स्वराज्य तो निर्धन व्यक्ति का स्वराज्य है। जीवन की आवश्यकताओं का भोग ऐसा होना चाहिए जैसे एक राजकुमार और सम्पन्न घराने का व्यक्ति अपने जीवन में करता है, परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि आपके पास भी उन्हीं की तरह विशाल महल हो। यह प्रसन्नता के लिए आवश्यक नहीं है। तुम या मैं इनमें लुप्त हो सकते हैं। आपके पास जीवन की वे अनिवार्य सुविधाएँ आवश्यक होनी चाहिएँ, जो एक अमीर व्यक्ति को उपलब्ध है। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है कि यह 'पूर्ण स्वराज्य' नहीं' जब तक इसमें अनिवार्य सुविधाएँ नही मिल जातीं।"

प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई ने आश्वासन दिया कि जनता पार्टी जनता की समस्त आशा-आकांक्षाओं का ध्यान रखेगी। उन्होंने इस बात की चेतावनी भी दी कि गांधीजी के स्वराज्य, आदर्श जीवन एवं सम्पूर्ण लोकतन्त्र की स्थापना करना उस समय तक कठिन है, जब तक जनता स्वयं गहरी सूझ-बूझ और सहयोग प्रदान नहीं करती। इसमें तो प्रत्येक प्राणी – नर-नारी, बच्चा-बूढ़ा, युवक-युवती, मजदूर और मालिक—सभी का योगदान चाहिए, तभी हम नवयुग के आदर्श को फलीभूत करने में सफल होंगे। उन्होंने इस शुभ कार्य के लिए समस्त देशवासियों को निमंत्रण दिया।

देश में पनप रही अनेक समस्याओं और जनता के खोये हुए विश्वास को ध्यान में रखते हुए प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई ने अपने वचन को पुनः राष्ट्र के सन्देश में दुहराया। जो इस प्रकार है—

"कई महीनों से छाये हुए भय और घबराहट के बादल छँट गए। यह स्थिति जनता द्वारा, जनता के लिये जन-क्रांति से ही संभव हो सकी है। हमारे संगठन की नजर में जनता सबसे ऊपर है। इसीलिये हमें बहुत भारी बहुमत मिला। इस बात को ध्यान में रखकर मुझे और मेरे सहयोगियों को काम करना है। पिछले चुनाव के जरिये जनता ने हममें आस्था प्रकट की है और हमें इस आस्था के योग्य अपने-आपको सिद्ध करना है। हम कोशिश करेंगे कि हमारे ऊपर जनता का यह विश्वास हमेशा बना रहे।

सबसे पहले तो मै आप सबको धन्यवाद दूँ कि आपने बहुत कठिन घड़ी में हमें विश्वास का भाजन बनाया। हम जानते हैं कि कितनी भारी संख्या में जन-

धन और यातायात के साधन हमारे विरुद्ध जुटाये गए। हमें चुनाव की तैयारी करने के लिए चन्द हफ्ते ही मिल सके। लेकिन हम आपको और आपके उन मूल्यों को पहचानते थे, जिनसे आपका लगाव था। वे मूल्य पिछले कुछ वर्षों में समाप्त कर दिए गए थे। हमें विश्वास था कि उन परम्परागत मूल्यों को जो हमें विरासत में मिले थे, आप निश्चय ही फिर से स्थापित करेंगे। आपके नीर-क्षीर विवेचन की शक्ति पर हमें भरोसा था। चुनाव-परिणामों ने हमारे इस विश्वास को सिद्ध कर दिया है। यही आपसी विश्वास की भावना, भविष्य की चुनौतियों का सामना करने में वरदान सिद्ध होगी। जनता सरकार आपके विश्वास और साहस का एक साधन है। आज मैं, राष्ट्रीय हित के विनम्र रक्षक के तौर पर आपसे बात कर रहा हूँ।

कहा जा रहा था कि अनुशासन और आर्थिक प्रगति के लिए 'इमरजेंसी' जरूरी है और चुनावों से राष्ट्र की प्रगति में बाधा पड़ती है और यह कि विरोधी तत्त्वों को सबक सिखाना जरूरी है। लेकिन सच्चे अनुशासन की इमारत भय की नींव पर नहीं खड़ी की जा सकती। गांधीजी ने आत्म-अनुशासन सिखाया था। हममें से हर एक को और सामूहिक रूप से भी आत्म-अनुशासन और आत्म-संयम सुनिश्चित करना है, जिसके बिना आजादी सच्चे अर्थ में आजादी नहीं रह जाती। किसानों और मजदूरों, बे-रोजगार तथा कमज़ोर वर्ग के लोगों को अनुशासन में रहने और बलिदान करने के लिए हम तब तक नहीं कह सकते, जब तक हुकूमत के शिखर पर बैठे लोग ईमानदारी और सादगी का उदाहरण न पेश करें।

आजादी और रोटी

विकासशील समाज में भी आजादी और रोटी में परस्पर विरोध नहीं है। ये दोनों एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं और इन्हें कभी भी अलग नहीं किया जाना चाहिये। हमें लोई हुई स्वतन्त्रता मिली है और इसके जरिए हमें प्रत्येक व्यक्ति को गरीबी और अभाव से मुक्त करना होगा। जनता पार्टी ने दस वर्षों में गरीबी मिटाने का संकल्प लिया है। यह काम दिल्ली या प्रदेशों की राजधानियों में बैठे मुट्ठी-भर लोगों द्वारा सम्भव नहीं है, चाहे वे कितने विवेकशील क्यों न हों? यह राजनीतिक तथा आर्थिक शक्ति के विकेन्द्रीकर[illegible] [illegible] में

ही सम्भव है। सत्ता का केन्द्रीयकरण प्रजातन्त्र के लिए अभिशाप है। हमें गांवों को आर्थिक प्रगति का आधार बनाना है। यह जाहिर है कि जिन इलाकों में गरीबी और पिछड़ापन ज्यादा है वहाँ उन्हें दूर करने के लिए पूरी ताकत लगानी होगी। बहुत समय से भारत मुख्यतः गाँवों में बसता आया है, जहाँ हमारे देश के अस्सी प्रतिशत लोग रहते हैं। सबसे पहले गाँवों और ग्रामवासियों की दशा सुधारनी होगी। रोज़गार की तलाश के लिए नगरों की ओर आने वाले ग्रामवासियों की राह गाँवों की ओर ही मोड़नी होगी। चाहिए तो यह कि शहर के लोग गाँवों की ताजी हवा में जाएँ, वहाँ के निवासियों की सेवा करें और ग्रामीण इलाकों की आर्थिक उन्नति में योगदान दें जिससे कि देश प्रगति के पथ पर आगे बढ़ सके।

आर्थिक प्रोग्राम

हमारे देश के लोग, यदि उन्हें सही दिशा में काम पर लगाया जाए तो शक्ति और साधन के प्रभावशाली पुंज साबित होंगे। सरकार की यह मान्यता है कि सबको काम करने का अधिकार है। वह अपनी आर्थिक योजनाओं और प्राथमिकताओं को इस प्रकार निर्धारित करेगी कि लोगों को अधिक से अधिक रोजगार के अवसर मिलें। कार्यक्रमों को चलाने के लिए हमारे पास अनाज का भरा-पूरा भण्डार है। गांधीजी का 'अन्त्योदय' का सिद्धान्त मात्र एक नैतिक सिद्धान्त नहीं है, बल्कि आर्थिक और सामाजिक अनिवार्यता भी है। घरेलू और छोटे उद्योगों से असीमित धन प्राप्त हो सकता है और उचित तकनीक से लाखों लोगों की उत्पादन-क्षमता का इस्तेमाल किया जा सकता है। विशेष रूप से जनसाधारण की रोजमर्रे की चीज़ों की पूर्ति की जा सकती है। बड़े नगरों, बड़ी मशीनों और बड़े विज्ञान का अपना स्थान है लेकिन ये प्राथमिकता और प्रमुखता का दावा नहीं कर सकते। हमें ऐसी संस्कृति का निर्माण करना होगा जो समतावादी हो और शोषणवादी न हो। हम गरीब और अमीर नगर और गाँव की दोहरी समाज-व्यवस्था और अधिक बर्दाश्त नहीं कर सकते। हमें गाँवों और शहरों को एक-दूसरे से अलग और विरोधी संस्कृतियों के रूप में नहीं लेना चाहिए बल्कि सीमित क्षेत्रों में परस्पर आश्रित रूप में समझना चाहिए।

इसलिये मैं आपसे अपील करता हूँ कि आप चाहे कृषि में हों या कुटीर

उद्योग में, लघु उद्योगों में हों या बड़े अथवा भारी उद्योग में, व्यापार-कार्यों मे हों या चाहे किसी भी क्षेत्र मे हों, आप हमें सहयोग दीजिए जिससे हम इस देश का चहुँमुखी विकास कर सकें।

सशक्त लोकतन्त्र

लोकतन्त्र की ताकत इसकी संस्थाओं और परम्पराओं में निहित है। सौभाग्य से, सबसे अन्धकारपूर्ण दिनों में भी जीवन के हर क्षेत्र के बहुत लोगों ने उद्दंड शासन के आगे घुटने टेकने से इन्कार कर दिया। परम्परा पर हमें अपनी संस्थाओं का फिर से निर्माण करना है और यह सुनिश्चित करना है कि निहित उद्देश्यों के लिये फिर कभी ऐसी विनाशक स्थिति न आए। संविधान संशोधन, यथोचित सुधार और प्रणाली परिवर्तन अनिवार्य होगा। जनता सरकार, खास तौर से प्रचार माध्यमों को यथाशीघ्र स्वतन्त्र करेगी और न्यायपालिका की स्वतन्त्रता की रक्षा करेगी। यह भी प्रस्ताव है कि सभी स्तरों पर भ्रष्टाचार तथा अधिकार के दुरुपयोग की जाँच करने के लिए एक स्वायत्त संगठन की तुरन्त स्थापना की जाए।

एक चीज़ जिसका मेरे दिल पर बेहद असर पड़ा है, वह है पिछले चुनावों मे देश के युवा-वर्ग की भूमिका। मैं उनके उत्साह तथा सामुदायिक जीवन में उचित स्थान लेने की इच्छा की सराहना करता हूँ। युवा-वर्ग की शिक्षा की चिन्ता हमें पहले होनी चाहिए। यह देखना हमारा कर्त्तव्य है कि उनका खाली समय राष्ट्रीय सेवा में लगे। हमें युवा-वर्ग को जनता की सेवा तथा रचनात्मक और सार्थक कार्यों में लगाना होगा। मुझे आशा है कि जल्दी ही इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए योजनाएँ बनाई जाएँगी। इस बीच युवा-वर्ग से मैं अपील करूँगा कि वे उन विभिन्न कार्यों के लिए शिक्षा ग्रहण करें जिनके दरवाजे उनके सामने खुले हैं। हमारी योजना में रोजगार की बहुत योजनाएँ बनाई जायेंगी जिनके अधीन उन्हें कई अवसर मिलेंगे।

गाँवों के प्रति दृष्टिकोण

युवा-वर्ग की शिक्षा इस प्रकार होनी चाहिए कि उनके चरित्र का विकास हो और साथ ही सारे देश के विकास में वे सहभागी हो सकें। बुनियादी तौर पर उस शिक्षा से उनमें आत्मविश्वास, अनुशासन तथा भय से मुक्त होने की

भावना जगे। हमारे देश में ग्रामीण जनता की प्रधानता होने के कारण यह जरूरी है कि उन्हें इस तरह की शिक्षा दी जाए जिससे वे गांव को त्याज्य स्थान न समझें बल्कि यह समझें कि वहां वे खुला और स्वस्थ जीवन बिता सकते हैं और ग्रामोत्थान के लिए अपनी प्रतिभा का इस्तेमाल कर सकते हैं।

हमारे राष्ट्रीय विकास में शिक्षकों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह दुःख की बात है कि कई कारणों से, जिनकी चर्चा मैं यहां नहीं कर सकता, देश में युवा-वर्ग के निर्माण में शिक्षकों के महत्त्व पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिये था, उतना नहीं दिया जा सका। हमारे राष्ट्रीय जीवन में विभिन्न रचनात्मक प्रभावों को जो विकास की दिशा में मोड़ना है, उनमें बचपन से वयस्क तक की शिक्षा को भी शामिल करना चाहिए। यह सरकार की उन नीतियों का एक पक्ष है, जिनकी सारे विश्व में मान्यता बढ़ रही है और मैं चाहूँगा कि भारत अपने युवा-वर्ग की शिक्षा और उत्थान पर विशेष ध्यान दे।

मुझे विश्वास है, आप इस बात को समझेंगे कि यह महान् कार्य जनता तथा नीति-निर्माताओं और उन लोगों के बीच सहयोग के बिना संभव नहीं है, जिन पर उन नीतियों को अमल में लाने का बोझ आएगा। जीवन के अधिकार का दावा करना आसान है लेकिन इसके लिए काम करना बहुत कठिन है। मैं उस दिन की प्रतीक्षा कर रहा हूं, जबकि देश के सभी वर्गों के लोग अपनी जिम्मेदारी समझेंगे। इसलिये हमारे आर्थिक कार्यक्रम और योजनाओं की सफलता की मुख्य शर्त यह है कि जिन कार्यों का मैंने अभी उल्लेख किया है, उनमें जनता का अनुशासित तथा व्यवस्थित ढंग से सहयोग मिले। आवश्यक धन जुटाने के लिए लोगों को अधिक से अधिक परिश्रम करना होगा, जरूरत से ज्यादा खर्च नहीं करना होगा और अधिक से अधिक बचत करनी होगी। इन बचतों को बैंकों में रखना होगा अथवा उत्पादक कार्यों में लगाना होगा या सरकारी कर्ज के लिए इस्तेमाल करना होगा। इसी तरीके से हम अपने आंतरिक साधन बढ़ा सकते हैं और वैदेशिक साधनों को कम कर सकते हैं। विदेशी मुद्रा कोष के मामले में आज हमारी स्थिति पहले की अपेक्षा अच्छी है लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि हम हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाएं। हमें न केवल इसमें निरन्तर वृद्धि करनी है बल्कि वित्तीय साधनों में सुधार भी लाना

है जिससे कि आर्थिक विकास होता रहे और वर्तमान शताब्दी की समाप्ति पहले कल्याणकारी राज के पथ पर हम काफी आगे बढ़ जाएँ।

राष्ट्र-निर्माण

राष्ट्र के पुनर्निर्माण और पुनःस्थापन की भारी जिम्मेदारी निभाने के लिए हमें सभी योग्य लोगों के समर्थन की जरूरत है। वकीलों से मैं कहना चाहूँगा कि कानून में निष्ठा और विश्वास के मामले में मैं उनके साथ हूँ, लेकिन उन्हें इस तरह से अपने-आपको संगठित करना होगा और ऐसे तरीके ढूंढ़ने होंगे कि देश के गरीब-से-गरीब आदमी को कानून का लाभ मिल सके और उसे कम खर्च में और जल्दी न्याय मिल सके। न्यायपालिका की स्वतन्त्रता के लिए मेरे मन में विश्वास किसी से कम नहीं है। लेकिन न्यायाधीशों से मेरी अपील है कि न्याय इस तरह से किया जाए कि आम आदमी उसकी सराहना कर सके। व्यापार और उद्योग में लगे लोगों से मैं कहना चाहूँगा कि वे सम्पत्ति के बारे में गांधीजी के 'ट्रस्टीशिप' के सिद्धान्तों को मानें। वे अपने कारखानों की क्षमता का पूरा उपयोग करके देश को समृद्ध बनाएँ। मैं इन लोगों से यह भी कहना चाहता हूँ कि वे लोगों की जरूरतों का नाजायज फायदा उठाकर कीमतें बढ़ाने और अनुचित मुनाफ़ा कमाने का लालच छोड़ दें और उसकी जगह उत्पादन बढ़ाएँ, जिससे देश खुशहाल हो और आर्थिक रूप से मजबूत बने।

जागरूकता के इस युग में मजदूरों को उनके उचित अधिकार से कोई वंचित नहीं रख सकता, लेकिन मांगों के कारण उत्पादन में कमी को न्याय-संगत नहीं ठहराया जा सकता। देश को आगे बढ़ना है, एक जगह खड़े नहीं रहना है और न ही पीछे जाना है। इसका अर्थ यह है कि हमें अधिक-से-अधिक उत्पादन करना है और देश की सम्पत्ति बढ़ानी है। मैं उन्हें आश्वासन दे सकता हूँ कि सरकार ऐसा कोई काम नहीं करेगी, जिससे उनके साथ कोई अन्याय हो।

स्वतन्त्रता—प्राकृतिक अधिकार

मैं मानता हूँ कि स्वतन्त्रता का अधिकार इस देश के सभी नागरिकों के लिए स्वाभाविक अधिकार है। हमने फैसला कर रखा है कि संविधान में निहित वे सभी अधिकार फिर से दिलाए जायेंगे, जो पिछले लगभग दो वर्षों में कम कर दिए गए थे। हमारा इरादा है कि इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सभी

आवश्यक उपाय किये जायेंगे, लेकिन मैं साथ ही इस बात पर भी जोर देना चाहूँगा कि अधिकारों के साथ कुछ जिम्मेदारियाँ भी होती हैं। इन जिम्मेदारियों की मूल बात यह समझना और मानना है कि देश और संविधान के प्रति वफादारी और संवैधानिक परम्पराओं और कार्यकलापों को बनाए रखना, नागरिकता का पहला कर्त्तव्य है। कानून के प्रति निष्ठा के मामले में हालांकि मैं किसी के आगे नहीं झुकता, लेकिन मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि हम सब न सिर्फ कानून को मानें, बल्कि उसका पालन करें और उसका आदर करें।

सत्याग्रह का सिद्धान्त

मैं उन लोगों की भावना को समझ सकता हूँ, जिन्हें कानून के लागू किये जाने या प्रशासनिक कार्यवाही किए जाने पर तकलीफ पहुँचती है। गलती को हिंसा से नहीं केवल संवैधानिक और शांतिपूर्ण तरीकों से ही सुधारा जा सकता है। गांधीजी ने सत्याग्रह का रास्ता, सामान्य प्रशासनिक असफलता की वजह से नहीं अपनाया, उन्होंने यह रास्ता तब अपनाया, जब गम्भीर रूप से अन्याय या कोई सार्वजनिक और नैतिक गलतियाँ की गईं। आपको उनसे प्रेरणा लेनी चाहिए और हिंसा के तरीकों से दूर रहकर गांधीजी के सत्याग्रह का सिद्धान्त अपनाना चाहिए। साथ ही मैं पुलिस दल से यह कहना चाहूँगा कि कानून और व्यवस्था बनाए रखने में उन्हें हिंसा का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, जब तक कि यह आवश्यक न हो और तब भी ताकत के कम-से-कम इस्तेमाल के सिद्धान्त पर चलना चाहिए। पुलिस जनता की सेवक है। उसे हिंसा और अपराध से निबटने के लिए अपने-आपको जनता का माध्यम मानना चाहिए। सरकारी कर्मचारियों को यह ध्यान में रखना होगा कि उन्हें सरकारी खजाने से वेतन लोगों की ईमानदारी और निष्पक्ष भाव से सेवा करने के लिए दिया जाता है, न कि अपने उद्देश्यों और स्वार्थों को पूरा करने के लिये। उन्हें केवल एक ही बात याद रखनी है और वह यह कि उन्हें देश और जनता की सेवा, आचरण और अनुशासन के नियम का पालन करते हुए करनी है। उन्हें अपना कर्त्तव्य पूरे विवेक और शालीनता के साथ निभाना है और कानूनों का पूरी तरह पालन करना है।

राष्ट्रीय सरकारें

देश के विभिन्न हिस्सों से जनता पार्टी ने जो सीटें जीती हैं, उसका स्वरूप चाहे कुछ भी हो, लेकिन दक्षिण के लोगों को इस बात का डर तो बिल्कुल नहीं होना चाहिए कि उनके हितों की अनदेखी कर दी जाएगी। यह एक राष्ट्रीय सरकार है, किसी क्षेत्र या जनता के किसी वर्ग को अपने-आपको बे-सहारा महसूस करने का कोई कारण नहीं है और मुझे विश्वास है कि समय के साथ वे महसूस करने लगेंगे कि यदि उनके मन में कोई डर था तो वह बेबुनियाद था और उनकी वाजिब इच्छाएँ पूरी की गई हैं। राज्यों में अन्य दलों की जो सरकारें हैं, उन्हें भी यह चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि केन्द्र से सहयोग में कोई कमी रहेगी। हम दल बदलवाने के काम में नहीं लगे हैं और न ही किसी प्रशासन को हटाना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि पंचायतों और नगरपालिकाओं को ज्यादा जिम्मेदारियाँ सौंपी जाएँ और समय-समय पर चुनाव कराकर उनका जन-प्रतिनिधि स्वरूप बनाए रखा जाए। जिले और ब्लाक छोटे हों, शासन को अच्छा बनाने और विकास में मदद मिल सकती है। जनता द्वारा चुनी गई सरकार जनता की और जनता के लिए होनी चाहिए। लोग आगे आकर कार्यक्रमों में भाग लें, इसके लिए यह जरूरी है कि लोकतंत्र की जड़ें गहरी हों।

शान्ति एवं गुटनिरपेक्षता

मैं कुछ शब्द विदेश सम्बन्धों के बारे में कहना चाहूँगा। हम पूरे दिल से शान्ति बनाए रखने में विश्वास रखते हैं, शान्ति के नारे में नहीं। हम शान्ति को ऐसा साधन मानते हैं, जो हम सब के लिए कल्याणकारी है और जिससे इस पृथ्वी की सुरक्षा हो सकती है। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि शान्ति हम तभी रख सकते हैं, जब हम बिना किसी डर या पक्षपात के या किसी का बुरा सोचे बिना, गुटनिरपेक्षता के सही रास्ते पर चलें। दुनिया की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं को मिलकर और आपसी सहयोग से हल करने का सिद्धान्त ही हमारी विदेश नीति का निर्देशक सिद्धान्त होगा। दुनिया के देश [illegible] साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर और सहयोग की भावना रख कर इस रास्ते पर चलेंगे और कोई दुराग्रह नहीं रखेंगे। आने वाले समय में बढ़ते हुए आर्थिक मानवीय सम्बन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में राजनीति की जगह लेंगे। हम इस

विकास में अपनी भूमिका तभी निभा सकते हैं, जबकि हम खुद आर्थिक तौर से मजबूत हों।

निर्देशक सिद्धान्त

मित्रो, मैंने अपने इस संदेश में उन निर्देशक सिद्धान्तों की बात कही है, जो हमारे विचार में हमें जनता के शासनादेश से मिले हैं और उन वायदों पर आधारित हैं, जो हमने जनता से किये हैं। हम अच्छी तरह समझते हैं कि हमारे देश के इतिहास में आजादी के बाद पहली बार विपक्ष के लिए सत्ताधारी दल के रूप में परीक्षा की घड़ी है। हम यह बात भी पूरी तरह जानते हैं कि हमने सदियों से चली आ रही समस्याओं का सामना एकजुट होकर करने का वचन दे रखा है। लेकिन, असल में हमने लोगों में और अपने में विश्वास पैदा किया है, जिसे बनाए रखने के लिए हमें लोगों का ही समर्थन चाहिए। हमारे इतिहास में अधिकतर ऐसा हुआ है कि हमारे देश को जायज हक नहीं मिला है। केवल ३० वर्ष पहले ही हम अपने भविष्य के स्वयं मालिक बने। लोग हमें लगातार रास्ता दिखाते रहे हैं। पिछली सरकार से निराश होकर लोगों ने अब हम में विश्वास प्रकट किया है। मैं उन्हें विश्वास दिला सकता हूँ कि तरक्की और कल्याण की जो बातें मैंने आपसे अभी कही है, उन्हें पूरा करने के लिए हम कोई कसर नहीं छोड़ेंगे और देश में ज्यादा-से-ज्यादा शान्ति, सुरक्षा और खुशहाली लाने का हर संभव उपाय करेंगे।" —जयहिन्द।

अतः मोरारजी देसाई ने प्रधानमन्त्री बनने के पश्चात् देश में पनप रही समस्याओं को रचनात्मक कार्यक्रम का स्पष्ट चित्रण कर दिया एवं भारतीय जनता को मिल-जुलकर नव-भारत के निर्माण के वचन को दुहराया।

राष्ट्रीय सरकारें

देश के विभिन्न हिस्सों से जनता पार्टी ने जो सीटें जीती हैं, उसका स्व
चाहे कुछ भी हो, लेकिन दक्षिण के लोगों को इस बात का डर तो बिल्कु
नहीं होना चाहिए कि उनके हितों की अनदेखी कर दी जाएगी। यह
राष्ट्रीय सरकार है, किसी क्षेत्र या जनता के किसी वर्ग को अपने-आपको दे
महसूस करने का कोई कारण नहीं है और मुझे विश्वास है कि समय के साथ
महसूस करने लगेंगे कि यदि उनके मन में कोई डर था तो वह बेबुनियाद
और उनकी वाजिब इच्छाएँ पूरी की गई हैं। राज्यों में अन्य दलों की
सरकारें है, उन्हे भी यह चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि केन्द्र से सहयोग में
कमी रहेगी। हम दल बदलवाने के काम में नहीं लगे हैं और न ही किसी प्र
सन को हटाना चाहते है। हम चाहते हैं कि पंचायतों और नगरपालिकाओं
ज्यादा जिम्मेदारियाँ सौंपी जाएँ और समय-समय पर चुनाव कराकर उन
जन-प्रतिनिधि स्वरूप बनाए रखा जाए। जिले और ब्लाक छोटे हों, शासन
अच्छा बनाने और विकास में मदद मिल सकती है। जनता द्वारा चुनी
सरकार जनता की और जनता के लिए होनी चाहिए। लोग आगे आकर
कर्मों में भाग लें, इसके लिए यह जरूरी है कि लोकतंत्र की जड़ें गहरी हों।

शान्ति एवं गुटनिरपेक्षता

मैं कुछ शब्द विदेश सम्बन्धों के बारे में कहना चाहूँगा। हम पूरे दि
शान्ति बनाए रखने में विश्वास रखते हैं, शान्ति के नारे में नहीं। हम शान्ति
ऐसा साधन मानते हैं, जो हम सब के लिए कल्याणकारी है और जिससे
पृथ्वी की सुरक्षा हो सकती है। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि शान्ति हम
रख सकते हैं, जब हम बिना किसी डर या पक्षपात के या किसी का बुरा
बिना, गुटनिरपेक्षता के सही रास्ते पर चलें। दुनिया की आर्थिक और सामा
जिक समस्याओं को मिलकर और आपसी सहयोग से हल करने का सिद्धा
ही हमारी विदेश नीति का निर्देशक सिद्धान्त होगा। दुनिया के शेष मार्गों
साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर और सहयोग की भावना रख कर हम इस रास्ते
चलेंगे और कोई दुराग्रह नहीं रखेंगे। आने वाले समय में बढ़ते हुए आर्थि
मानवीय सम्बन्ध, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में राजनीति की जगह लेंगे। हम इ

विकास में अपनी भूमिका तभी निभा सकते हैं, जबकि हम खुद आर्थिक तौर से मजबूत हों।

निर्देशक सिद्धान्त

मित्रो, मैंने अपने इस संदेश में उन निर्देशक सिद्धान्तों की बात कही है, जो हमारे विचार में हमें जनता के शासनादेश से मिले हैं और उन वायदों पर आधारित हैं, जो हमने जनता से किये हैं। हम अच्छी तरह समझते हैं कि हमारे देश के इतिहास में आज़ादी के बाद पहली बार विपक्ष के लिए सत्ताधारी दल के रूप में परीक्षा की घड़ी है। हम यह बात भी पूरी तरह जानते हैं कि हमने सदियों से चली आ रही समस्याओं का सामना एकजुट होकर करने का वचन दे रखा है। लेकिन, असल में हमने लोगों में और अपने में विश्वास पैदा किया है, जिसे बनाए रखने के लिए हमें लोगों का ही समर्थन चाहिए। हमारे इतिहास में अधिकतर ऐसा हुआ है कि हमारे देश को जायज हक नहीं मिला है। केवल ३० वर्ष पहले ही हम अपने भविष्य के स्वयं मालिक बने। लोग हमें लगातार रास्ता दिखाते रहे हैं। पिछली सरकार से निराश होकर लोगों ने अब हम में विश्वास प्रकट किया है। मैं उन्हें विश्वास दिला सकता हूँ कि तरक्की और कल्याण की जो बातें मैंने आपसे अभी कही हैं, उन्हें पूरा करने के लिए हम कोई कसर नहीं छोड़ेंगे और देश में ज्यादा-से-ज्यादा शान्ति, सुरक्षा और खुशहाली लाने का हर संभव उपाय करेंगे।" —जयहिन्द।

अतः मोरारजी देसाई ने प्रधानमन्त्री बनने के पश्चात् देश की समस्याओं को रचनात्मक कार्यक्रम का स्पष्ट चित्रण कर दिया। जनता को मिल-जुलकर नव-भारत के निर्माण के वचन को दुहर

जन-आकांक्षाओं का नेतृत्व



संसदीय प्रणाली के सिद्धान्त-अनुसार प्रधानमन्त्री संसद और कैबिनेट का एक 'महत्त्वपूर्ण अंग' एवं 'समकक्षों में प्रथम' होता है। दूसरे शब्दों में वह कैबिनेट की आधार-शिला है जिस पर कैबिनेट-रूपी समस्त भवन खड़ा है, जो देश के प्रत्येक मामले को अपने नियन्त्रण में रखता है, कैबिनेट का निर्माण, नियुक्ति, विभागों का वितरण और पद से अपदस्थ करने इत्यादि सभी कार्यों की देख-रेख प्रधानमन्त्री की इच्छानुसार होती है। राजनीति के प्रसिद्ध पंडित रेमजेम्योर ने संसदीय प्रणाली के नियम-अनुसार ब्रिटिश प्रधान मन्त्री के विषय में कहा है "कि उसे (प्रधानमन्त्री को) इतनी शक्ति प्राप्त है जितनी संसार में किसी भी संवैधानिक शासक को प्राप्त नहीं, संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति को भी नहीं, जब तक उसके दल को कॉमन सदन (House of Commons) में बहुमत प्राप्त है तब तक वह ऐसे काम कर सकता है जो अमेरिका का राष्ट्रपति नहीं कर सकता। वह इस प्रकार का वचन दे सकता है कि अमुक प्रकार की सन्धि की जाएगी तथा स्वीकृत हो जाएगी; अमुक विधान स्वीकृत हो जाएगा अथवा अमुक-धन-राशि संसद द्वारा स्वीकार कर ली जाएगी।" प्रो० लॉस्की के मत-अनुसार 'प्रधानमन्त्री वह धुरी है जिसके चारों ओर समस्त सरकारी मशीन चक्कर लगाती है' इसी प्रकार प्रो० मनरो ने प्रधानमन्त्री को 'राज्य-रूपी जहाज का कप्तान' बतलाया है।

ठीक इंगलैंड के अलिखित संविधान की तरह भारत ने अपने संविधान में संसदीय प्रणाली को स्वीकारा है। संसदीय प्रणाली में दूसरी विशेषता यह होती है कि राष्ट्रपति केवल 'रबर स्टाम्प' (औपचारिक अध्यक्ष) समान होता है।

राज्य के सभी कार्यों के प्रति उत्तरदायी प्रधानमन्त्री होता है न कि राष्ट्रपति। अतः प्रधानमन्त्री शक्तिशाली और राष्ट्रीय सम्मान का पद है। इसके अनुसार भारतीय प्रधानमन्त्री की स्थिति इंगलैंड के प्रधानमन्त्री के समान ही है। भारत की जनता ने श्री मोरारजी देसाई को जनता पार्टी द्वारा अपने दल का सर्वसम्मति से नेता चुने जाने का स्वागत किया है। उन्होंने इसे उपयुक्त और बुद्धिमत्ता का निर्णय माना है। उनके गरिमामय जीवन के साथ १९३० के बाद का विशिष्टतम और ऐतिहासिक उपलब्धियों का दशक जुड़ा हुआ है। वह निरंतर नयी ऊँचाइयों का अनुसंधान करते हुए राष्ट्रीय नेता के रूप में चमकते सितारे के समान रहे हैं।

देश के बदलते परिवेश में मोरारजी देसाई द्वारा जन-आकांक्षाओं का नेतृत्व करना एक गौरव का विषय है। जनता पार्टी संयुक्त दलों का संगम समान है। जिसने राष्ट्रपिता के सिद्धान्तों और आदर्शों के आधार पर विजय प्राप्त की है। यह बात बहुत सुखद है कि मोरारजी को सभी दलों का विश्वास प्राप्त है और उनके कुशल नेतृत्व में आशा की जा सकती है कि वह देश के स्वच्छ और सुन्दर प्रशासन के साथ-साथ अपने गहन एवं विशाल अनुभव से विश्व में प्रतिष्ठा के पात्र बनेंगे।

इसमें सन्देह नहीं है कि स्वतन्त्र भारत ने अपने तीस वर्षों में संतुलन नीति; गुट-निरपेक्षता; अहिंसा एवं समाजगत नीतियों का पालन किया, लेकिन देश में रिश्वतखोरी; चोरबाजारी; काला धन; जीवन की उपयोगी वस्तुओं का अभाव; बेरोजगारी; महँगाई और भ्रष्टाचार का मात्र बोलबाला हो गया। सारे देश की सम्पत्ति चन्द मुट्ठियों में बन्द होकर रह गई। मानव का मापदण्ड केवल पैसा ही रह गया। एक ओर समाज में उसी व्यक्ति को मान, आदर और प्रतिष्ठा मिली जिसके पास आज अतुल सम्पदा, नौकर चाकर, मोटर बंगला, बैंक-बैलेंस इत्यादि अनेक सुविधाएँ हैं और दूसरी ओर गरीब जनता का शोषण और ऊपर से अर्थ-व्यवस्था की असमानता—क्या यह महात्मा गांधी के सपनों का भारत है ? क्या इसी के लिए लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने 'सम्पूर्ण क्रांति' का नारा दिया ?

आज के नव-निर्माण युग में इस बात की आवश्यकता है कि देश में देशहित की भावना को उजागर और प्रेरित करना है जिससे मानवीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र

में शुद्धिकरण हो सके। देश में पनप रहे पक्षपात, ढीलापन, सस्ती आकांक्षा, ढोंग, दिखावा, लालच इत्यादि बुराइयों को दूर करने हेतु एवं गांधीजी के सिद्धान्तों पर आधारित समाज, लोकतांत्रिक और धर्मनिरपेक्ष समाज की रचना के लिए जनता ने जनता पार्टी में अपना विश्वास अभिव्यक्त किया है। अब देश में जाति, भाषा, रंग, नस्ल, सम्प्रदाय, प्रांतीयता, क्षेत्रीयता, एवं धर्म की विषमता को छोड़कर नए-भवन का निर्माण करने का ही लक्ष्य है। पश्चिम की सभ्यता और मृग मरीचिका से मुक्ति दिलाकर मानव को स्वतन्त्रता, समता एवं भ्रातृत्व के मूल्यों पर आधारित समाज की स्थापना करना एकमात्र उद्देश्य है।

यहाँ पर एक प्रश्न सहज ही उठता है कि क्या मोरारजी भाई अकेले इस भवन का निर्माण रातों-रात कर सकते हैं संभवतः नहीं। एक दिन में ऐसा करना असम्भव ही नहीं, अपितु कठिन है। इसके लिए जनता-जनार्दन का सहयोग भी होना अनिवार्य हो जाता है। इसके लिए जनता पार्टी के नेताओं पर एक बड़ा बोझ आ जाता है, उन्हें 'कुर्सी की भूख' को छोड़कर समाज के अन्दर शोषण, घुटन, ऊँच-नीच, भेद-भाव की भावना को कम करने के लिए दिन-रात एक कर देना चाहिए तभी समाजवादी क्रांति की परिकल्पना की जा सकती है। यहाँ पर एक बात दुखद है कि जनता पार्टी के विभिन्न नेता अभी तक अपने पुराने अस्तित्व को भुला नहीं सके, वे पहले की तरह सत्ता-तंत्र को अपने हाथों में लेने को उत्सुक हैं। यह उनके लिए चेतावनी मात्र है। यह मानना पड़ेगा कि वर्षों तक एक-दूसरे के विरोध की भावना त्रिवेणी के संगम-समान विभिन्न धाराओं का अलग-अलग रूप लिए हुए हैं किन्तु इन विभिन्न रंगों को मिलाकर 'सतरंगी' हो जाना ही देश के लिए श्रेष्ठ है। अपने व्यक्तिगत अस्तित्व को छोड़कर एक कड़ी समान अपने अन्दर फैल रही भ्रष्ट राजनीति, नौकरशाही की जड़ों को फैलने न देना तथा सामाजिक-आर्थिक विषमता, रोग और अमानुषिक जीवन से घिरे जन-सेवा के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करना राष्ट्रीय नव-निर्माण की ओर सशक्त कदम है।

दूसरे आम आदमी को इस बात से बिल्कुल सरोकार नहीं है कि आपात्‌काल स्थिति में हुई ज्यादतियों के प्रति क्या किया जाता है बल्कि वे तो यह सुनने को आतुर हैं कि उन्हें जीवनोपयोगी वस्तुएँ उचित दामों पर मिल रही हैं, कीमतें रातों-रात बढ़ तो नहीं रहीं। शिक्षित और अशिक्षित लोगों को आजीविका की

गारन्टी मिल रही है, समाज में रिश्वत, चोर-बाजारी भाग रही है। दहेज की प्रथा का उन्मूलन, जाति-भेद, स्वार्थी-मनोवृत्ति, सम्प्रदायवाद से उत्पन्न बुराइयाँ इत्यादि समस्याओं में ठहराव आ रहा है, अन्यथा नहीं। यही जनता सरकार की पद्धति की ओर मुख्य प्रश्नचिह्न है।

इन सब बातों को हल के लिए अलादीन के चिराग के समान चमत्कार की आशा नहीं है लेकिन पार्टी के नेता अपने घोषित लक्ष्य की ओर ईमानदारी से बढ़े। दिन में समाजवादी और रात्रि में व्यक्तिवादी वाली दोहरी चाल, भ्रष्ट राजनीति एवं अवसरवादी तत्वों को कूड़ेदान में फेंकने का संकल्प लेना है। हमें कुछ मूल्यवान चीजें विरासत में मिली हैं। हमें दिलोजान से उनकी रक्षा करनी है और देश को महान् बनाना है। उदाहरण के लिए अन्धविश्वास, अन्याय-पूर्ण सामाजिक बन्धन और ऊँच-नीच पर आधारित जाति-प्रथा इस समाज को दीमक की तरह खा रही है। यह कोई नयी बात नहीं है, यह तो भगवान् बुद्ध के समय से चली आ रही है लेकिन अब वह समय आ गया है, जब हम समाज के माथे पर लगे इस कलंक को मिटाने की प्रतिज्ञा लें।

देश की इन परिस्थितियों को सम्मुख रखते हुए पार्टी के नेता के कर्तव्य अनेक हो जाते हैं। यह तो सौभाग्य की बात है कि पार्टी के नेता मोरारजी देसाई अपने कर्तव्य, धर्म और आचरण के पक्के अनुयायी हैं। वह अपने सिद्धान्तों और आदर्शों की दृष्टि से कठोर और कट्टर हैं। वह नागरिक की स्वतन्त्रता, मूल अधिकारों, धर्म-निरपेक्ष एवं अनुशासन के पक्के समर्थक हैं। देश की क्रान्तिकारी परिवर्तनों की लम्बी प्रक्रियाओं में साहसपूर्ण और साहस नेतृत्व के लिए मोरारजी स्वयं प्रेरणा के स्रोत हैं।

मोरारजी देसाई ने स्वयं प्रधानमन्त्री के कर्तव्य, धर्म और आचरण के विषय में अपना मत दिया है। उनके अनुसार ये तीन गुण इस प्रकार हैं—

(१) सच्ची दिशा की ओर कदम बढ़ाने में प्रधानमन्त्री को कोई भी हिचकिचाहट नहीं होनी चाहिए। ऐसा कदम उठाने में भले ही उसकी लोकप्रियता कम हो जाये लेकिन प्रधानमन्त्री को इसका भय और चिन्ता नहीं होनी चाहिए।

(२) सत्तालोलुप होकर पद पर [illegible] करनी चाहिए।

(३) उसे सदा देश की सेवा में ही रत रहना चाहिए, स्वार्थवश निजी लाभ का कदापि विचार नहीं उत्पन्न होना चाहिए ।

(४) प्रधानमन्त्री को अपने सहयोगी कार्यकर्ताओं का संपूर्ण विश्वास प्राप्त होना चाहिए । वे उन्हें सम्मान और प्रेम की दृष्टि से देखें एवं उत्कृष्ट प्रकार का वातावरण उत्पन्न करने का प्रयास करना चाहिए ।

(५) प्रधानमन्त्री की सिद्धांत-निष्ठा और कार्यदक्षता के विषय में किसी प्रकार की शिकायत का अवसर नहीं मिलना चाहिए ।

प्रधानमन्त्री मोरारजी देसाई देश में फैली सभी समस्याओं से भली-भाँति परिचित हैं । उन्होंने अपने प्रथम प्रेस-सम्मेलन में घोषणा की कि मेरे प्रशासन का मुख्य लक्ष्य गरीबी हटाना, बेकारी का उन्मूलन, आपात्काल में छीने गये नागरिक अधिकार वापस दिलाना, कम सरकारी खर्च, समाचार पत्रों में फिरोज-गांधी कानून को पुनः लागू करना एवं न्यायालयों की स्वतन्त्रता एवं अनुशासन का एक अद्भुत उदाहरण पेश करना ही ध्येय है । उन्होंने अपने चुनाव-अभियान में ४२वें संविधान संशोधन के विषय में आश्वस्त किया कि उनकी पार्टी के सत्ता में आने से पहला काम यह होगा कि संविधान में आपात्काल के दौरान आयी विकृतियों का परिमार्जन किया जाये, ताकि ऐसे हालात दोबारा न लादे जा सकें ।

मोरारजी देसाई ने भाषा-नीति के विषय में अपना तर्क देते हुए कहा"कि कोई भी भाषा किसी पर जबरन थोपी नही जायेगी । इसमें सन्देह नहीं है कि हिन्दी हमारी राष्ट्रीय भाषा है, अतः जनता को चाहिए कि धीरे-धीरे इसे 'सम्पर्क भाषा' के रूप में स्वीकार करें ।

प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई ने देश के विकास के लिए अर्थ-व्यवस्था को पूर्णतः नई दिशा देने के वचन को दुहराया । उन्होंने ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देने को कहा । मूल्य-वृद्धि व आर्थिक चुनौतियों के लिए ठोस कदम उठाये जायेंगे । विकासशील देश में रोटी, कपड़ा, मकान मूलतः अनिवार्य तत्व हैं । जनता पार्टी का आगामी दस वर्षों में गरीबी मिटाने का संकल्प है । जनता की शान्ति, सुरक्षा और खुशहाली के लिए सरकार प्रत्येक सम्भव कदम उठायेगी ।

रोजगार के अधिक अवसर प्रदान करेगी केवल पड़ोसी देशों से ही नहीं, समस्त विश्व की दोस्ती मधुर सम्बन्धों पर आधारित हो।

उन्होंने भारत के अणु बम न बनाने की बात को दुहराते हुए कहा कि अणु बम से युद्ध नहीं जीता जा सकता एवं इससे देश की सुरक्षा सम्भव नहीं है। उनका मत है कि अणु विस्फोट का उपयोग शान्तिमय आवश्यकताओं के लिए ही करना उचित है। इसी प्रकार उन्होंने देश में सम्पूर्ण नशाबन्दी एव धूम्रपान निषेध लागू करने की बात पर जोर दिया। इसके बिना जनता विशेषतः समाज के कमजोर वर्ग के लोगों की सामाजिक व आर्थिक उन्नति नहीं हो सकती।

अत: मोरारजी देसाई अपनी निर्भीकता, देश-भक्ति, संगठन-शक्ति एवं प्रतिभा के आधार पर विभिन्न समस्याओं को सफलतापूर्वक निबटाने की क्षमता रखते हैं। हमें पूर्ण आशा और विश्वास है कि वह इस राष्ट्रीय पद पर प्रेरणा का केन्द्र-बिन्दु बने रहेंगे। वह अपनी अद्वितीय प्रतिभा की छाप एवं सिद्धान्तों को जन-जीवन के साथ व्यावहारिक संगति देने में सहयोग देंगे।

हमारी ईश्वर से प्रार्थना है कि वह इनकी आयु दीर्घ करें ताकि देश उनके नेतृत्व में फले-फूले एवं विश्व में ज्योति के समान चमके।

लाल किले की प्राचीर से

(प्रधानमन्त्री श्री मोरारजी देसाई का १५ अगस्त १९७७ को लालकिले की प्राचीर से राष्ट्र के नाम एक सन्देश)।

बहनो और भाइयो,

तीस साल पहले अंग्रेज इस देश को इसी दिन छोड़ गए। भारत आजाद हुआ। जवाहरलालजी ने इसी ऐतिहासिक जगह पर हमारा आजाद झंडा लह-राया और इसी दिन गांधीजी ने कलकत्ता में जाकर शान्ति की स्थापना की। इसी ऐतिहासिक भूमि पर हम आज यहां, आजादी के तीस साल में जैसे हुए साल, गलती देते हुए आए हैं और हम देते हैं। तीस साल हमारे गुजरे। इनमें कई ऊँच-नीच हमने देखी, कई गम और खुशियां मनाईं, कई मुसीबतों से भी गुजरे।

हमने कुछ तरक्की भी की, खासकर के उद्योगों में। शिक्षा में हम काफी आगे बढ़े और खेती में भी हमने कुछ किया। मगर इन तीस साल में हमारे ऊपर तीन हमले भी हुए। लड़ाइयों से हम अच्छे ढंग से बाहर निकले, कुछ मज-बूत हुए और हमारे देश में देशाभिमान ने सारी मौकों पर बचाया। हमने तरक्की की, लेकिन गरीबों तक पहुँची नहीं, खास करके ६०-७० फीसदी लोगों को उसका लाभ बहुत कम मिला। मैं किसी का दोष निकालना नहीं चाहता, दोष हमारा सबका है। लेकिन जो कुछ हुआ उससे हमें सीखना भी चाहिए कि! क्योंकि हम सीखेंगे नहीं तो वही गलतियां दोहराते जायेंगे, तो जिस मकसद के लिए हमने आजादी हासिल की थी, वह मकसद हमारे देशवासियों को, सबको

सुखी बनाना, प्रसन्न बनाना और दुनिया के सब देशों में भारतीय संस्कृति को ऊंचा उठाना और हम उन्नत मस्तक से सारी दुनिया के उपयोग में आएँ, वह मकसद पूरा नहीं हुआ है। ३० साल में पूरा होना पिछले इतिहास को देखते हुए संभव भी नहीं था। लेकिन सबसे ज्यादा जो हमारी कमी रही, वह कमी तो हम, कुछ गांधीजी के रास्ते से भटक गए, कुछ पश्चिम के अनुकरण में पड़ गए।

हमारे देश की संस्कृति के लिए जो गौरव हमें होना चाहिए, वह गौरव आज भी हमें नहीं होता। इसलिए कि हम उस रास्ते पर भटक गए।

देश की परिस्थिति कुछ काफी गए छह-सात साल में बिगड़ी। लोकतन्त्र खतरे में पड़ा। दुनिया में हमारी इज्जत बिल्कुल गिर गई। लोगों को ऐसा महसूस होने लगा कि इस देश में लोकतन्त्र चल नहीं सकता और भारतीय लोग लोकतन्त्र में विश्वास नहीं रखते हैं। इससे काफी नुकसान पहुंचा। भय का वातावरण पाया गया। काफी जुल्म भी हुआ दो साल तक। इमरजेंसी ऐसी लादी गई जो लादना, नहीं चाहिए था। इसमें उनके दिलों में भी अब शक नहीं रहना चाहिए, पर कुछ लोग कभी भी करते हैं। गलती करना इतना खराब नहीं है, जितना गलती पर कायम रहना और उसका बचाव करना और फिर से करते रहना।

इमरजेंसी के दौरान जनता को काफी कष्ट उठाना पड़ा। भय से घिरे हुए रहे और देश कहां पहुंचेगा इसमें निराशा जहाँ देखो वहाँ छा गई। परन्तु [illegible] ही चुनाव जाहिर किया गया और जिन लोगों को बन्द रखा गया था, [illegible] तादाद हजारों की संख्या में थी, लाखों से भी ज्यादा होगी, उनको भी [illegible] शुरू किया गया और तब से देश में एक नई हवा फैली। देश की निराशा [illegible] लगी, भय का वातावरण हटा। पूरा हटा, ऐसा तो मैं नहीं कह सकता, [illegible] नहीं जाता, मगर जो अन्तिम स्तर तक पहुंच गया था, वह काफी कम [illegible]। चुनाव में जनता ने जो, जनता पार्टी जनता के कहने से बनी, [illegible] कई सदियों बाद एक नया दौर शुरू हुआ।

आज भी इसी प्रयास में लगे हुए हैं। मगर इसकी मैं चिंता नहीं करता। हमारा काम बराबर रहेगा, जो लोग ऐसा काम करेंगे, उनको सुधारना पड़ेगा, समझना पड़ेगा, इसी विश्वास से हम चलते हैं। अगर हरिजनों पर जुल्म होता है, तो इससे कोई इंकार नहीं कर सकता। जहाँ तक अस्पृश्यता पूरी-पूरी जातियों में नहीं हटती, वहाँ तक ऐसी हरकतें होती रहेंगी। तीस साल में इस दिशा में जितना काम करना चाहिए उतना काम हमने नहीं किया। इसमें हम सब जिम्मेदार हैं। पाँच साल में यह कलंक हमें खत्म करना है, धो देना है। इसी कलंक की वजह से हमने आज तक काफी दुःख उठाए हैं। पाप का बदला हमें भुगतना ही पड़ता है। कोई छोटा पाप नहीं था, बहुत बड़ा पाप इस देश में हुआ है और हम करते रहे।

और पाप से हमें बचना है और उसका प्रायश्चित्त भी हमें पूरा करना है। आज भी इसमें से हम पूरे निकले नहीं हैं। इसमें से हमें निकलना है। जब तक ऐसा नहीं करेंगे, तब तक देश को सुखी बनाने की ताकत हममें आ नहीं सकती है। इसीलिए पाँच साल में इसको पूरा खत्म कर देना है। इतना ही नहीं, मगर हमारे सब देशवासी एक सरीखे बनें। इस ढंग से हमें बराबर हवा बनानी है। हरेक के दिल में ऐसी भावना बनी रहे, ऐसा खयाल होता रहे, ऐसा अनुभव होता रहे, इस तरीके से अपना काम करना है।

सरकारी अधिकारियों को अपना रुख बदलना पड़ेगा, बदलना चाहिए। मैं उनको उतना दोष नहीं देता जितना जो उनको हुक्म देने वाले हैं, उनको देता हूँ। हमारा उद्देश्य होगा जो हम राजतन्त्र पूरा-पूरा लोगों की सेवा में लगा दें। यह देश हमारा देश होगा। मगर अधिकारियों को भी यह सोचना होगा उनका भी कर्तव्य है। कोई बिगड़े तो इससे उनको नहीं बिगड़ना चाहिए, वे लोगों के सेवक हैं। लोगों के पैसे उनको मिलते हैं सेवा करने के लिए, वह जो सेवा उनको पूरी करनी चाहिए यह सबके सब बराबर अपना काम करें, यह जुल्म सारा खत्म हो जाएगा, कोई जुल्म नहीं कर पाएगा।

ऐसी हवा हम बना सकते हैं। इसीलिए उन सबको हमने हिदायतें दे दी हैं कि इस तरीके से करें और नहीं करेंगे तो कसूरवार होंगे और सजा के पात्र होंगे। इसमें मुझे कोई शक नहीं। इस ढंग से हमें आगे बढ़ना है और देशवासियों को पूरा-पूरा विश्वास दिलाना है और उनके दिल में विश्वास हो तभी हमारा काम ठीक होगा, ऐसा मैं मानता हूँ।

इसीलिए जनता से भी मेरी प्रार्थना है कि जनता इसमें बराबर जागृत रहे, निर्भयता से काम करे और जब तक जनता निर्भयता से काम नहीं करती, तब तक राज चलाने वाले भी कुछ हिल जाते हैं। जनता जागृत रहेगी, निर्भय

होकर अपनी बात बराबर करेगी तब राज भी गलत तरीके से काम नहीं कर सकेंगे और वे काम करेंगे तो उन्हें हटना पड़ेगा, तेजी से हटना पड़ेगा। यही जनता की शक्ति हम पैदा करना चाहते हैं और इसीलिए हम यह चाहते हैं कि हमारे देहातों में जिनकी ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है, बिल्कुल ध्यान नहीं दिया गया है, ऐसा मैं नहीं कह सकता। मगर सबसे ज्यादा ध्यान जहां देना चाहिए था वह हम नहीं दे पाए, तो हमें देना है।

देहातों में हमारी ८० फीसदी जनता रहती है। वहां काफी बेकारी और अर्ध-बेकारी है। बहुत से लोग भाग-भाग कर शहरों में जाते हैं। शहरों में गंदी बस्तियां बनती हैं, जो बढ़ती रहती हैं और जिम्मेदारी इसीलिए बढ़ती जाती है। कोई भी ऐसी बस्तियों में रहे अच्छा नहीं रह सकता। मैं भी ऐसी बस्तियों में रहूं तो मैं भी ऐसा बन जाऊंगा, इसमें मुझे कोई शक नहीं है। इसीलिए ऐसी बस्तियों को हमें ठीक कर देना है। ऐसी बस्तियां बनें नहीं, इसीलिए देहातों को ऐसा हमें बनाना है, ऐसा उनका विकास करना है जिससे कि देहातों में से कोई शहरों की तरफ न दौड़े बल्कि शहरवासी अपनी तन्दुरुस्ती के लिए देहातों की ओर जाएं ऐसी हवा हमें पैदा करनी है।

इसलिए बहुत बड़ा काम करना है। काम मुश्किल है मगर मुश्किल काम करने लायक है। मुश्किल के काम में हम उमंग से आगे बढ़ें, तब यह काम हम कर सकते हैं। निराशा का कोई कारण नहीं है, निराशा इन्सान को मारने वाली होती है, निराशा इन्सान को खतम कर देती है। भय का वातावरण निराशा पैदा करता है, भय के वातावरण से निकलना है। इसलिए राजतन्त्र को, जनता को पूरी सहायता पहुंचानी है, जिससे जनता निर्भय बने। यही काम राजतंत्र का सबसे ज्यादा जरूरी है, ऐसा मैं मानता हूं। यह जब तक नहीं होगा, तब तक हमारा सब काम ढीला चलेगा। पूरा हम नहीं कर पाएंगे, ऐसे मैं मानता हूं। इसीलिए इस काम की ओर हम लगे हुए हैं। कई कठिनाइयां होती हैं।

जनता पार्टी बनी है, नई बनी है। इसमें भी जो पहले की बातें हैं, इसमें से कुछ आ जाए तो इसे नहीं समझना चाहिए कि जनता पार्टी कमजोर हो जाती है, जनता पार्टी इसमें से ही मजबूत होकर निकलेगी, बराबर मजबूत होगी और इसे कोई तोड़ नहीं पाएगा, यह मेरा विश्वास है और इसमें मैं जनता की सहायता चाहता हूं। आपको कोई भी गुमराह करना चाहे उसमें आप न फंसें, यही मेरी प्रार्थना है। आप में कोई भी शंका-आशंका हो, हमसे पूछें, मुझे कहें, मैं उसका बराबर खुलासा करूंगा और जहां दुरुस्ती करनी है, मैं और मेरे साथी दुरुस्ती करेंगे। यही विश्वास मैं आपको दिला सकता हूं। इसीलिए

चाहिए कि आप जागृत रहें, आप बे-खौफ रहें, आप बिल्कुल निर्भय रहें और हम जो सही बातें हैं करते रहें।

आपका अधिकार है कि हमें हमारी गलतियाँ आप बता दें। हमारा काम है कि हम आपकी बात सुनें, सही बात आपको बताएँ, गलतियाँ हों, हम उनको कबूल करें और उनको दुरुस्त करें। यह हमारा काम है। मगर इसी काम में हमारा पूरा-पूरा सहकार होना चाहिए। हिन्दुस्तान एक परिवार-सा बन जाए, यही सपना मैं देख रहा हूँ और पूरा होगा। इसी विश्वास से उसकी ओर कदम हम उठा रहे हैं, हम एक परिवार बन जाएँ, तभी हमारा हिन्दुस्तान एक होगा और तभी हिन्दुस्तान सारी दुनिया को अपने जीवन से सहाय्य कर सकेगा, मददगार हो सकेगा। दुनिया की सेवा करने के लिए हमें लायक बनना है। हमें औरों की सेवा लेने की बजाय हमें सेवा करनी है। सेवा लेते हैं वह भी इसीलिए लेते हैं कि हम ज्यादा सेवा करने के लायक बन जाएँ। और वही सेवा दुनिया की हम करें तभी गांधीजी का सपना पूरा हो सकेगा।

गांधीजी चाहते थे कि हम देश में रामराज्य हो, रामराज्य का मतलब यही है कि जो राज्य चलाने वाले हैं, वे तकलीफें उठाएँ परन्तु जनता को तकलीफ न उठाने दें। वे अपने जीवन में लोगों को बराबर सब बातें समझाएँ और जीवन में सादगी रखें और हमेशा सेवा करना है, यह न भूलें। वे हमेशा सेवक रहें और जनता उनको सेवक बनाए रखे।

ऐसी शक्ति जनता में पैदा करें, यही अपना काम है। इसीलिए तो मैं बार-बार जनता से प्रार्थना करता हूँ कि हमारी कोई कमी है तो आप उस कमी को बताने में कभी कमजोर न रहें। पूरी ताकत से हमें बताएँ। मैंने एक बार यह भी कहा था कि मेरी गलती हो, आप मेरा कान पकड़ें। मेरा पकड़ें मायने हमारे सब साथियों का भी पकड़ें, यह नहीं कि मेरे अकेले का पकड़ें। हम सब साथी एक ही हैं, हम कोई अलग-अलग नहीं हैं, सब मिलकर एक होते हैं, इसमें न कोई ऊँचा है, और न कोई नीचा है, सब कोई बड़े हैं, कोई छोटा नहीं है, मगर सारी जनता उनसे ऊँची है, यह बात जनता कभी न भूले।

इसीलिए जनता को इसी तरीके से तैयार करना यही हमारा प्रमुख कार्य है। इसमें मुझे कोई शक नहीं है। मगर ये सारी बातें बेकारी हटाए बगैर पूरी होने वाली नहीं हैं। बेकारी है, तब तक ये सारी बातें पूरी हो नहीं सकतीं। इसीलिए देहातों में हमें पूरा काम देना है। कोई भी अर्ध-बेकार न रहे, हरेक को पूरा-पूरा काम मिले और उत्पादक काम मिले। तब उत्पादन बढ़ेगा। उत्पादन का खर्च कम होगा, जो बहुत ही जरूरी है। कीमतें कम हो जाएँ तब देश ऊँचा उठे।

कीमतों का कम करना बड़ा जरूरी है। आज लोगों में काफी इससे कुछ निराशा भी होती है कि अभी भी कुछ काम नहीं हुआ। मगर मेरी आपसे इतनी प्रार्थना है कि आप इतना समझें कि जो हालत बना दी गयी थी उस हालत में एकदम परिणाम लाना असंभव था।

मगर कुछ कदम हम उठा रहे हैं। इससे कुछ परिणाम आते रहे हैं। यह भी मैं देखता हूँ, मगर जनता को पूरा मालूम हो, ऐसा परिणाम अब तक नहीं आया। मगर मेरा विश्वास है कि कुछ समय में वह भी स्थिति हम पैदा कर सकेंगे। जनता को भी पूरा विश्वास हो जायगा कि यह काम भी हो रहा है।

इसीलिए हमें उत्पादन बढ़ाना है। वह तो जनता ही कर सकती है। हाँ, जनता और सरकार मिलकर कर सकते है, दोनों को करना है। हमें यही काम में लगे रहना है और पूरे विश्वास से चलना है, पूरे सहकार से, मुहब्बत से चलना है, यही सबक हिन्दुस्तान बराबर अपने जीवन में उतार ले, हरेक देश-वासी अपने जीवन में उतार ले। तब हमारा देश जैसा गांधीजी चाहते थे ऐसा बनेगा। तब रामराज्य होगा और रामराज्य में न कोई दुखी होगा, न कोई रोगी होगा, न कोई लड़ने वाले होंगे, सब एक-दूसरे को फायदा करते रहेंगे।

हमारी संस्कृति की बुनियाद है कि इंसान अपना न सोचे। इंसान तब इंसान कहलाने के लायक बनता है कि जब वह दूसरों के लिए काम करे, दूसरों के सुख में अपना सुख माने, सबको सुखी बनाने में अपना सुख माने, किसी का दुख हटाने में अपना सुख माने, यह हमारी संस्कृति की बुनियाद है।

उसमें हम कुछ कमजोर पड़ गए है। उसे फिर से हमें उभारना है। उसमें जनता बराबर साथ देगी, यह भी मेरा विश्वास है। इसीलिए उमंग से, आशा से, निश्चय से हम आगे बढ़ें। निराशा को हम फेंक दें, भय को हम हटा दें, यही आज के दिन हम सब को संकल्प करना है। आप करेंगे यही मेरा विश्वास है। और हम आगे बढ़ेंगे, इसमें मुझे कोई शंका नहीं है।

हिन्दुस्तान को कोई नही मार सका है, आज तक। दुनिया की कई देशों की हस्तियाँ मिट गईं, यह देश कभी नहीं मिटा। इकबाल ने गाया था, "कुछ बात है कि हस्ती मिटती नही हमारी।" यही बात है जो हमारी बुनियाद मे है यही तो खूबी है इस देश की, इसीलिए कभी निराशा नही होनी चाहिए और उसको लेकर हम आगे बढ़ें। यही आज के दिन पर हम संकल्प करें, तब मेरा विश्वास है कि इस देश को आगे [illegible] में कोई नहीं रोक सकेगा और सारी दुनिया की सेवा करने के लिए हम लायक बनेंगे। जयहिन्द।